

अकादमिक शोध के लिए उच्च स्तर समीक्षित जर्नल

ISSN:

संस्करण -1 जनवरी-2025

ग्रामीण भारत संवाद

ग्रामीण आयामों की मासिक बहुविषयक शोध पत्रिका



प्रकाशक

मातृभूमि पब्लिकेशन हाउस

डी-18, रजत विहार, दानिश नगर रोड, बागमुगालिया,
होशंगाबाद रोड, भोपाल 462026 वेबसाइट:

ईमेल आईडी: publicationmatrubhumi@gmail.com संपर्क सूत्र : 8817914858

सहयोग

इंटरनेशनल रूरल डेवलपमेंट एंड रिसर्च एसोसिएशन (I-RUDRA)

मैदान गढ़ी, नई दिल्ली- 110068

सलाहकार एवं संपादकीय बोर्ड के माननीय सदस्य

नाम	पदनाम	संस्थान
डॉ० दिग्विजय सिंह	मुख्य संपादक	मातृभूमि प्रकाशन गृह
प्रो. अरविंदो महतो	प्रोफेसर, ग्रामीण विकास विभाग	इग्नू, नई दिल्ली
डॉ. डब्ल्यूजी प्रसन्ना कुमार	अध्यक्ष	राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा अकादमिक नेटवर्क
डॉ. बलकार पूनिया सहायक	प्रोफेसर, ग्रामीण विकास विभाग	इग्नू, नई दिल्ली
डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पांडे	प्रमुख, ग्रामीण प्रबंधन विभाग	एमजीसीजीवी, चित्रकूट
डॉ. लोकाेश जैन	एसोसिएट प्रोफेसर, ग्रामीण प्रबंधन विभाग	गुजरात विद्यापीठ
डॉ. देवेन्द्र नाथ दाश	सहायक निदेशक	एमजीएनसीआरई, हैदराबाद
डॉ. जोगेंद्र पाठक अध्यक्ष	ग्रामीण प्रबंधन विभाग	एक्सआईएमजे, जबलपुर
प्रोफेसर मनीषा पांडे	निदेशक, आजीविका संसाधन केंद्र	आरएनटीयू, भोपाल
डॉ. जयंत चौधरी	ग्रामीण प्रबंधन	सीयूटी, अगरतला
डॉ. रणधीर सिंह	अकादमिक परामर्शदाता	इग्नू, नई दिल्ली
डॉ० प्रदीप मल्हान	प्रोफेसर, ग्रामीण विकास	पंचायती राज और सामुदायिक विकास संस्थान हरियाणा
डॉ. रमेश चतुर्वेदी	ग्रामीण प्रबंधन विभाग	बीबीए केंद्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ
प्रोफेसर राधाकृष्णन लक्ष्मणन	ग्रामीण प्रबंधन विभाग	गांधीग्राम ग्रामीण संस्थान, तमिलनाडु
डॉ. अनामलाई बालामुराह	ग्रामीण प्रबंधन विभाग	
प्रोफेसर आलोक	ग्रामीण प्रबंधन विभाग	बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ. माणिक कुमार		जेबीपीएसएसआई, झांसी
प्रो. कामेश्वर पंडित		पटना

अनुसंधान पत्र सूची

क्र.सं.	शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ संख्या
1	गांधीवादी दर्शन और ग्रामीण विकास की पहल	प्रोफेसर अरबिंदो महतो	1
2	ग्रामीण हरियाणा में महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए सरकार द्वारा 4 योग पहल	श्रीमती अमरजीत कौर	5
3	संस्कृत साहित्य और साहित्यानुवाद का स्वरूप एवं परंपराएं	डॉ. गोविन्द कुमार धारीवाल	11
4	“वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम : जनपद मेरठ का एक अध्ययन”	डॉ० अमरजीत सिंह मलिक	15
5	अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के प्रतिमानों में नेताजी सुभाष चंद्र बोस और नरेंद्र मोदी का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ निकिता राज, अतिथि शिक्षिका	19
6	ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की सामाजिक स्थिति: भेदभाव और स्वीकृति का अध्यय	श्री आशीष कुमार	25
7	लखनऊ परिक्षेत्र का हस्तशिल्प चिकन उद्योग ¹	डॉ० नीतू मौर्याए तबस्सुम खान	30
8	भारत के पारंपरिक लोक चित्रों का आधार ग्रामीण जनजीवन	डॉ.सरिता पाण्डेय	35
9	भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व का ऐतिहासिक विश्लेषण	डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पांडे	39
10	हनुमानगढ़ जिले में पर्यावरणीय समस्याएं एवं उनके समाधान के सुझाव	डॉ महेश कुमार महेन्द्र सिंह	45
11	ग्रामीण परिवेश में युवा विकास और सामाजिक कौशल पर खेलों का प्रभाव	डॉ.कपिल कुमार साहू	50

गांधीवादी दर्शन और ग्रामीण विकास पहलें

प्रोफेसर अरविंदो महतो
इग्नू, नई दिल्ली

सारांश

महात्मा गांधी के ग्रामीण विकास के दार्शनिक ढांचे में आत्मनिर्भरता, स्थिरता और समुदायआधारित प्रगति को प्राथमिकता दी गई है। उनका मानना था कि भारतीय - स्वतंत्रता की प्राप्तिगांवों को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और व्यवहार्य इकाइयों में बदलने पर निर्भर करती है। स्वदेशी, ग्राम स्वराज, सर्वोदय, सादा जीवन और नई तालीम जैसे उनके मुख्य सिद्धांत एक अधिक समावेशी, करुणामय और एकीकृत सामाजिक संरचना की स्थापना पर केंद्रित हैं।

ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न पहलें लागू की गई हैं, जिनमें 1956 में स्थापित खादी और ग्रामोद्योग आयोग (केवीआईसी), विनोबा भावे के नेतृत्व में भूदान आंदोलन, 1952 में शुरू किया गया सामुदायिक विकास कार्यक्रम, ग्रामीण सहकारी समितियों को बढ़ावा देना, जैविक कृषि पद्धतियाँ, स्वयं सहायता समूह, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) जैसी ग्रामीण रोजगार योजनाएं और एक जिला एक उत्पाद (ओडीओपी) पहल शामिल हैं।

शहरी प्रवास, बाहरी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता और पर्यावरणीय क्षरण जैसी चुनौतियों के बावजूद, आत्मनिर्भरता, समान संसाधन वितरण और जमीनी स्तर पर सशक्तिकरण के संबंध में गांधीवादी दृष्टिकोण ग्रामीण विकास के लिए एक टिकाऊ और समावेशी ढांचा प्रदान कर सकता है। इन आदर्शों के पुनरुद्धार और आधुनिकीकरण में ग्रामीण क्षेत्रों में सतत विकास, समानता और समग्र कल्याण को बढ़ावा देने की क्षमता है, जिससे ग्रामीण भारत के लिए एक समृद्ध भविष्य का मार्ग प्रशस्त होगा।

परिचय

महात्मा गांधी, जिन्हें अक्सर भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में उनके अतुलनीय योगदान के कारण भारतीय राष्ट्र का जनक माना जाता है, ने देश की प्रगति और समृद्धि के लिए ग्रामीण विकास को एक महत्वपूर्ण आधार के रूप में विशेष महत्व दिया था। उनका दर्शन गहन था और आत्मनिर्भरता, स्थिरता और समुदायों को अपने विकास की पहल करने के लिए सशक्त बनाने के सिद्धांतों में गहराई से निहित था। उनका दृढ़ विश्वास था कि भारत के लिए वास्तविक स्वतंत्रता और समग्र विकास का मार्ग उसके गांवों के परिवर्तन में निहित है, जिसे वे राष्ट्र की धड़कन मानते थे, आत्मनिर्भर, आर्थिक रूप से व्यवहार्य इकाइयों में। गांधी के दृष्टिकोण के अनुसार, भारत आत्मनिर्भरता के प्रोत्साहन और ग्राम स्तर पर संसाधनों के सतत उपयोग के माध्यम से जमीनी स्तर पर सच्चा सशक्तिकरण और लचीलापन ला सकता है, जिससे सामूहिक प्रगति और कल्याण पर फलने-फूलने वाले समाज में समावेशी समृद्धि का मार्ग प्रशस्त होगा। अनिवार्य रूप से, प्रगति के आधार के रूप में ग्रामीण विकास की परिवर्तनकारी शक्तियों में गांधी का अटूट विश्वास पीढ़ी दर पीढ़ी को आत्मनिर्भरता, स्थिरता और समुदाय-संचालित विकास के शाश्वत संदेश के साथ प्रेरित करता है, ताकि भविष्य के लिए एक मजबूत और अधिक लचीला भारत बनाया जा सके।

ग्रामीण विकास पर गांधीवादी दर्शन आत्मनिर्भरता (स्वदेशी): स्वदेशी ने न केवल आर्थिक विकास के लिए एक प्रोत्साहन के रूप में स्वदेशी संसाधनों और प्रतिभाओं के उपयोग के महत्व को रेखांकित किया, बल्कि कुटीर उद्योगों और लघु-स्तरीय उद्यमों की स्थापना की भी जोरदार वकालत की। इस दृष्टिकोण का उद्देश्य विदेशी बाजारों और बाहरी स्रोतों पर निर्भरता को कम करके आत्मनिर्भरता और स्वायत्तता विकसित करना था। स्थानीय उत्पादन और वस्तुओं की खपत को बढ़ावा देते हुए, आत्मनिर्भरता ने सशक्तिकरण और सतत विकास की भावना के सामने आर्थिक लचीलापन और सामुदायिक लचीलापन बढ़ाने की कोशिश की। घरेलू उद्योगों और कौशल विकास की वकालत करते

हुए, आत्मनिर्भरता का उद्देश्य किसी के समुदाय और विरासत में गर्व की भावना पैदा करना था, स्थानीय विशेषज्ञता और नवाचार में निहित सतत विकास और समृद्धि की नींव का निर्माण करना था। ग्राम स्वराज (ग्राम स्वशासन): ग्राम स्वराज, या दूसरे शब्दों में ग्राम स्वशासन, उस मूल सिद्धांत पर जोर देता है जो गांवों को स्वतंत्र रूप से शासित और प्रबंधित करने के लिए आत्मनिर्भर इकाइयां मानता है। यह अवधारणा न केवल गांवों के भीतर स्वायत्तता की वकालत करती है, बल्कि स्थानीय समुदायों को निर्णय लेने की शक्ति देकर स्वशासन की अवधारणा को भी शामिल करती है। ग्राम स्वराज का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों को स्वशासन अपनाने के लिए प्रोत्साहित करके उन्हें सशक्त बनाना है, इस प्रकार समुदायों को सक्रिय रूप से शामिल होने और अपने विकास की पहल को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करना है। यह दृष्टिकोण एक प्रतिमान बदलाव की कल्पना करता है जहां ग्रामीण निवासी परिवर्तन के सक्रिय एजेंट बनते हैं, अपनी प्रगति के मार्ग को आगे बढ़ाते हैं और अपने भविष्य के प्रक्षेपवक्र को आकार देते हैं। इस ढांचे के माध्यम से, ग्राम स्वराज आत्मनिर्भर गांवों की परिकल्पना करता है जो अपने स्वयं के विकास के मार्ग को निर्धारित करने के लिए आवश्यक उपकरणों और संसाधनों से संपन्न हैं, जिससे सामूहिक विकास और समृद्धि के प्रति ग्रामीणों के बीच स्वामित्व और जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा मिलता है।

सर्वोदय (सभी का कल्याण):

सर्वोदय का दर्शन अनिवार्य रूप से एक सामाजिकराजनीतिक अवधारणा है-, जो समाज के सबसे कमजोर और हाशिए पर पड़े वर्गों की बेहद और सशक्तिकरण पर बहुत जोर देता है। विचारधारा का उद्देश्य संसाधनों और अवसरों का न्यायपूर्ण और निष्पक्ष वितरण है, ताकि खेल के मैदान को समतल किया जा सके और अधिक समतापूर्ण समाज बनाया जा सके। सबसे वंचितों की जरूरतों पर ध्यान केंद्रित करके, सर्वोदय प्रणालीगत असमानताओं और सामाजिक अन्याय को संबोधित करने की कोशिश कर रहा है। सार्वभौमिक उत्थान पर इसका ध्यान समाज के सभी सदस्यों की परस्पर संबद्धता को इंगित करता है, क्योंकि सभी को

विकास और विकास के लिए बुनियादी ऋररतों और अवसरों तक पहुँच होनी चाहिए। कुल मिलाकर, सर्वोदय के मूल सिद्धांत समाज के निर्माण के लिए आवश्यक समावेशिता, करुणा और एकता को दर्शाते हैं, जहाँ हर सदस्य जीवित रहने और समूह की भलाई में मूल्य जोड़ने में सक्षम हो।

साधारण जीवन और पर्यावरणीय स्थिरता:

साधारण जीवन और पर्यावरणीय स्थिरता संबंधित अवधारणाएँ हैं जो संसाधनों के उपयोग को कम करने और प्रकृति के साथ सामंजस्य को बढ़ावा देती हैं। सादा जीवन के समर्थक एक ऐसी जीवन शैली को प्रोत्साहित करते हैं जो प्रकृति को महत्व देती है और पर्यावरण पर मानव प्रभाव को कम करती है। फसल चक्र और जैविक खेती जैसी संधारणीय कृषि पद्धतियाँ स्थानीय खाद्य प्रणालियों का समर्थन करती हैं और कार्बन फुटप्रिंट को कम करती हैं। रीसाइक्लिंग और खाद बनाने जैसे अपशिष्ट प्रबंधन पर्यावरण को स्वस्थ बनाने और प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने में मदद करते हैं। इस प्रकार, इन मूल्यों का प्रतिनिधित्व करके, लोग सभी जीवित प्राणियों और पारिस्थितिकी प्रणालियों के प्रति सम्मान बनाए रखते हुए एक अधिक संधारणीय भविष्य बना सकते हैं। ग्रामीण विकास के लिए शिक्षा (नई तालीम): नई तालीम, सरल शब्दों में, ग्रामीण विकास का एक शैक्षिक दृष्टिकोण है जो सिद्धांत और व्यवहार को जोड़ता है। यह विधि पुस्तक ज्ञान को आवश्यक व्यावहारिक कौशल के साथ जोड़ती है जो समग्र विकास की सुविधा प्रदान करती है। नई तालीम व्यावसायिक प्रशिक्षण पर महत्व देती है, इस प्रकार व्यक्तियों को अपने ग्रामीण स्थानों में सक्षम और सफल होने के साधन प्रदान करती है। यह कृषि और शिल्प में विशेष पाठ्यक्रम प्रदान करता है, शिक्षा को वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप लाता है और छात्रों को संधारणीय आजीविका से लैस करता है। इसका उद्देश्य शिक्षा को न केवल एक सैद्धांतिक अभ्यास बनाना है, बल्कि एक ऐसी संपत्ति बनाना है जो सीधे ग्रामीण जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती है।

ग्रामीण विकास के लिए गांधीवादी-प्रेरित पहल

1. खादी और ग्रामोद्योग:

महात्मा गांधी के आत्मनिर्भरता और ग्रामीण रोजगार के दृष्टिकोण को 1956 में खादी और ग्रामोद्योग आयोग के निर्माण द्वारा आगे बढ़ाया गया था। KVIC का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक हस्तशिल्प और लघु उद्योगों को संरक्षित और बढ़ावा देना है। यह कारीगरों और ग्रामीण उद्यमियों को महत्वपूर्ण सहायता और संसाधन प्रदान करता है, जिससे वे अपने क्षेत्रों के सामाजिक-आर्थिक विकास में योगदान कर सकें। इन शिल्पों को पोषित करते हुए, KVIC स्थायी आजीविका को बढ़ावा देकर और ग्रामीण समुदायों को गौरव और पहचान बनाने में मदद करके भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करता है। KVIC आत्मनिर्भरता और ग्रामीण समृद्धि के गांधीवादी दृष्टिकोण का प्रतीक है जो यह सुनिश्चित करेगा कि खादी की यह विरासत आने वाले वर्षों में लचीलेपन और आर्थिक स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में जारी रहे।

2. भूमि सुधार और भूदान आंदोलन:

भूदान आंदोलन महात्मा गांधी के एक महान शिष्य विनोबा भावे के संरक्षण में भारत में शुरू किए गए महत्वपूर्ण भूमि सुधारों में से एक था। इसका उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में भूमिहीनता को मिटाना और निष्पक्षता, समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करना था। भावे की दूरदर्शिता और प्रतिबद्धता के कारण इसने कृषि समुदायों में करुणा, सहयोग और एकजुटता की संस्कृति को जन्म दिया। आंदोलन ने मूल रूप से महसूस किया कि प्रत्येक व्यक्ति, चाहे उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति कुछ भी हो, सशक्तिकरण और जीविका उद्देश्यों के लिए भूमि का हकदार है। इसका उद्देश्य गरीबी को कम करना, समावेशी विकास और समानता और धार्मिकता के आधार पर सामंजस्यपूर्ण समाज बनाना था। इसने कृषि समुदायों को करुणा, सहयोग और एकजुटता की संस्कृति देने का प्रयास किया।

3. सामुदायिक विकास कार्यक्रम:

1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम को गांधीवादी सिद्धांतों के साथ डिजाइन किया गया था। इसने शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और कृषि सुधार जैसी ग्रामीण समस्याओं को सीधे लक्षित किया। पंचायतों को विकास गतिविधियों को तैयार करने और निष्पादित करने के लिए केंद्रीय प्रतिष्ठान के रूप में बनाया गया था जो सामाजिक और आर्थिक सुधार पैदा कर सकते थे। कार्यक्रम ने जीवन स्तर और कल्याण में सुधार के माध्यम से शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि जैसे पहलुओं में स्थायी समाधानों का उपयोग किया। सामुदायिक भागीदारी और सशक्तिकरण के माध्यम से, कार्यक्रम ने ग्रामीण भारत में गरीबी और अविश्वसितता के मूल कारणों को संबोधित करते हुए विकास के लिए एक अधिक समावेशी और सहभागी दृष्टिकोण का आधार स्थापित किया।

4. ग्रामीण सहकारिताएँ:

ग्रामीण सहकारिताओं ने खेती, ऋण और विपणन में नागरिकों को सशक्त बनाकर समुदायों को गहराई से बदल दिया है। गांधीवादी सिद्धांतों से जन्मा अमूल सहकारी का सहकारी मॉडल समुदाय द्वारा संचालित पहल और सतत विकास का एक अच्छा उदाहरण है। सामूहिक स्वामित्व और आत्मनिर्भरता से प्रेरित, मॉडल ने ग्रामीण परिवेश में आर्थिक विकास, सामाजिक सामंजस्य और बेहतर जीवन स्तर को बढ़ावा दिया। एकजुटता और आपसी सहयोग के आधार पर सहकारी आंदोलनों ने हमेशा ग्रामीण समुदायों पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा है, जैसा कि अमूल जैसी सहकारी समितियों के मॉडल से स्पष्ट है।

5. स्वच्छता और स्वास्थ्य:

स्वच्छता और स्वास्थ्य हमेशा मानव जाति के इतिहास का अभिन्न अंग रहे हैं, क्योंकि गांधी ने इस बात पर जोर दिया था कि यह केवल एक अच्छे विवेक के बारे में नहीं है, बल्कि हमारे आस-पास के वातावरण को साफ करने के बारे में भी है। गांधीयों में स्वच्छता प्रथाओं के लिए उनके समर्थन ने आज स्वच्छ भारत अभियान (स्वच्छ भारत मिशन) जैसे आंदोलनों को जन्म दिया है। यह सिद्धांत कि बुनियादी स्वच्छता अभ्यास परिवर्तनकारी हो सकते हैं, स्वस्थ समुदायों और पर्यावरण को बढ़ावा देने के लिए वैश्विक पहलों को प्रेरित करना जारी रखता है। उनके अभियान दुनिया को स्वच्छता और स्वच्छता की याद दिलाते हैं और कैसे वे वास्तव में समग्र कल्याण और सामाजिक उन्नति को बढ़ावा दे सकते हैं, इस

प्रकार यह याद दिलाते हैं कि सतत विकास को प्राप्त करने के लिए सामूहिक प्रयास किए जाने चाहिए।

6. सतत कृषि:

महात्मा गांधी के जैविक खेती और स्थानीय इनपुट के विचारों ने सतत और पुनर्योजी कृषि आंदोलनों को प्रेरित किया है। पर्यावरण के अनुकूल खेती के उनके सिद्धांत दीर्घकालिक पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और लचीलेपन को सुनिश्चित करते हैं। आधुनिक कृषि पद्धतियाँ, कई मायनों में, उनकी विरासत से प्रेरित हैं, जिसमें न्यूनतम पर्यावरणीय क्षति और स्थानीय समुदाय को समर्थन पर ध्यान केंद्रित किया गया है। यही कारण है कि मनुष्यों और प्रकृति के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध के लिए गांधी के दृष्टिकोण ने सामाजिक और आर्थिक समानता की ओर उन्मुख सतत कृषि पहलों को बढ़ते देखा है। उनका दृष्टिकोण वैश्विक कृषि क्षेत्र में छाप छोड़ता है क्योंकि यह खाद्य उत्पादन के नैतिक और पर्यावरण के प्रति जागरूक तरीकों की ओर बदलाव के आह्वान पर बहुत प्रभाव डालता है।

गांधीवादी दर्शन की आधुनिक प्रासंगिकता

गांधीवादी दर्शन आधुनिक समय में भी अत्यंत प्रासंगिक बना हुआ है, जो ग्रामीण विकास, आर्थिक सशक्तीकरण और शासन में समकालीन चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करता है। गांधीवादी आदर्शों को आधुनिक कार्यक्रमों और नीतियों में एकीकृत करके, हम एक स्थायी और समतापूर्ण समाज का निर्माण कर सकते हैं जो गरिमा, आत्मनिर्भरता और सामुदायिक भावना के मूल्यों को बनाए रखता है।

स्वयं सहायता समूह (एसएचजी)

स्वयं सहायता समूह ग्रामीण महिलाओं और अन्य हाशिए पर पड़े वर्गों के सशक्तीकरण के लिए एक नई ताकत रहे हैं, जो आत्मनिर्भरता और सामूहिक कार्रवाई के गांधीवादी आदर्शवाद से निकटता से जुड़े हुए हैं। अपने संसाधनों को एक साथ जोड़कर, एसएचजी सामाजिक सशक्तीकरण के अलावा वित्तीय स्वतंत्रता और कौशल विकास सुनिश्चित करते हैं। ग्रामीणों के बीच सहकारी प्रयास स्थानीय समस्याओं से निपटने के साथ-साथ आर्थिक गतिविधि उत्पन्न करने के लिए गांव के लोगों के हाथों में एक मजबूत साधन हो सकते हैं, जैसा कि गांधीजी अक्सर बकालत करते थे। एसएचजी के माध्यम से माइक्रोफाइनेंस जैसे उपरोक्त कार्यक्रम महिलाओं को ऋण के साथ लाभान्वित करते हैं और सामुदायिक भागीदारी, सामाजिक सामंजस्य और जमीनी स्तर पर नेतृत्व में योगदान देते हैं जो महात्मा गांधी के विचारों के अभिन्न सिद्धांत हैं।

ग्रामीण रोजगार योजनाएँ

मनरेगा अपने आप में गांधीवादी दर्शन के समकालीन अनुप्रयोग का एक अनुकरणीय उदाहरण है। मनरेगा ग्रामीण परिवारों को 100 दिन का वेतन रोजगार की गारंटी देकर गरीबी को दूर करता है और ग्रामीण कार्यबल के लिए श्रम की गरिमा के साथ-साथ आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा देता है। गांधी के अनुसार, श्रम को गरिमा का स्रोत होना चाहिए और गांवों को उत्पादक रोजगार का केंद्र होना

चाहिए। यह योजना न केवल आय सुरक्षा प्रदान करती है, बल्कि सड़क, सिंचाई सुविधाएँ और जल संरक्षण संरचनाओं जैसी महत्वपूर्ण टिकाऊ संपत्तियाँ भी विकसित करती है, इस प्रकार गांधीवादी विचारधारा के अनुरूप सतत ग्रामीण विकास सुनिश्चित करती है।

हस्तशिल्प को बढ़ावा

गांधी ने आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने और भारत की सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करने के साधन के रूप में हस्तशिल्प और पारंपरिक उद्योगों - विशेष रूप से खादी और हथकरघा - के पुनरुद्धार का पुरजोर समर्थन किया। आधुनिक वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट (ODOP) पहल ग्रामीण कारीगरों और शिल्पकारों का समर्थन करके इस दृष्टिकोण को दर्शाती है। ODOP एक जिले के लिए विशिष्ट उत्पादों की पहचान करता है, कारीगरों को उत्पादन और बाजार तक पहुँच बढ़ाने के लिए विपणन सहायता, प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह पहल ग्रामीण उद्योगों को पुनर्जीवित करती है, स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाती है, तथा स्वदेशी कौशल और शिल्प को बढ़ावा देकर विकेंद्रीकरण और आत्मनिर्भरता पर गांधीजी के जोर के अनुरूप है।

विकेंद्रीकृत शासन

गांधी का ग्राम स्वराज या ग्राम स्वशासन का दृष्टिकोण भारत की पंचायती राज प्रणाली में परिलक्षित होता है, जो स्थानीय शासन निकायों को ग्राम विकास के लिए निर्णय लेने का अधिकार देता है। 73वें संशोधन के माध्यम से संविधान में निहित, पंचायती राज विकेंद्रीकृत शासन को बढ़ावा देता है, यह सुनिश्चित करता है कि निर्णय लेना भागीदारीपूर्ण और समावेशी हो। यह प्रणाली ग्रामीणों को अपनी आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को संबोधित करने की अनुमति देकर जवाबदेही, स्थानीय नेतृत्व और सतत विकास को बढ़ावा देती है। यह गांधी के इस विश्वास की एक ठोस अभिव्यक्ति है कि सच्चा लोकतंत्र जमीनी स्तर पर शुरू होता है, क्योंकि सशक्त गांव राष्ट्रों के विकास के लिए शुरुआती बिंदु होंगे।

गांधीवादी दृष्टिकोण की चुनौतियाँ

शहरी प्रवास और पारंपरिक ग्राम उद्योगों का पतन: गांधी ने आत्मनिर्भर गांवों की कल्पना की जहां स्थानीय शिल्प और उद्योग पनपे। हालांकि, रोजगार की तलाश में बड़े पैमाने पर शहरी क्षेत्रों में पलायन ने पारंपरिक ग्राम उद्योगों जैसे हथकरघा बुनाई, मिट्टी के बर्तन और कारीगरी के शिल्प में गिरावट ला दी है। शहरी केंद्रों की ओर बदलाव ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बाधित किया है, जिससे गांधी द्वारा समर्थित आत्मनिर्भरता की भावना कमजोर हुई है। इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप गांवों की आबादी कम हुई है और आजीविका के लिए शहरी उद्योगों पर निर्भरता बढ़ी है। ग्रामीण विकास के लिए बाहरी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता: गांधी के मॉडल ने ग्रामीण समुदायों की भागीदारी और सशक्तीकरण द्वारा संचालित जमीनी स्तर के विकास पर जोर दिया। हालांकि, आज कई ग्रामीण विकास पहल सरकारी कार्यक्रमों, गैर सरकारी संगठनों और अंतरराष्ट्रीय संगठनों से बाहरी फंडिंग पर बहुत अधिक निर्भर हैं। जबकि ये संसाधन आवश्यक हैं, बाहरी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता आत्मनिर्भरता

और समुदाय-संचालित प्रगति के सिद्धांतों को कमजोर करती है, जिससे टिकाऊ, स्वायत्त विकास के बजाय निर्भरता की संस्कृति को बढ़ावा मिलता है। आधुनिक कृषि प्रथाओं के कारण पर्यावरणीय गिरावट: गांधी ने प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने की वकालत की, जैविक और पारंपरिक कृषि प्रथाओं को बढ़ावा दिया जो मिट्टी की उर्वरता और पारिस्थितिक संतुलन को संरक्षित करती हैं। इन प्रथाओं के कारण मिट्टी का क्षरण, पानी की कमी और जैव विविधता का नुकसान हुआ है, जो गांधी के स्थायी ग्रामीण जीवन के दृष्टिकोण का खंडन करता है। आधुनिक कृषि के पर्यावरणीय परिणाम गांधीवादी सिद्धांतों के अनुरूप पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं की ओर लौटने की आवश्यकता को उजागर करते हैं।

निष्कर्ष

ग्रामीण विकास के लिए एक स्थायी और समावेशी ढांचा जो समय से परे है, उसे गांधीवादी दर्शन द्वारा निर्देशित किया जा सकता है, जिसकी जड़ें अहिंसा और समुदाय-केंद्रित विकास में हैं। गांधी का आत्मनिर्भरता, संसाधनों का उचित वितरण और जमीनी स्तर पर सशक्तिकरण पर जोर आज ग्रामीण समुदायों द्वारा सामना की जा रही बहुमुखी चुनौतियों के समाधान के लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है। इन दीर्घकालिक सिद्धांतों का उपयोग करके भारत में ग्रामीण विकास के लिए एक अधिक एकीकृत और लचीला दृष्टिकोण विकसित किया जा सकता है जो आर्थिक रूप से मजबूत, सामाजिक रूप से एकजुट और पर्यावरण के प्रति संवेदनशील दोनों है। समकालीन संदर्भ के लिए इन आदर्शों को पुनर्जीवित और आधुनिक बनाना एक समग्र, जन-केंद्रित रणनीति के लिए अवसर प्रदान कर सकता है जो ग्रामीण क्षेत्रों में सतत विकास, समानता और कल्याण को बढ़ावा देता है। समकालीन ग्रामीण विकास पहलों में, गांधीवादी दर्शन के सार को अपनाना भविष्य के संपन्न ग्रामीण समुदायों को प्रकृति और एक-दूसरे के साथ सामंजस्य स्थापित करने वाले सशक्त व्यक्ति बनाने के लिए एक खाका तैयार करेगा। इस समग्र और दूरदर्शी दृष्टिकोण के माध्यम से, हम वास्तव में महात्मा गांधी द्वारा बताए गए शाश्वत ज्ञान और मूल्यों पर आधारित

ग्रामीण भारत के लिए एक अधिक टिकाऊ और समृद्ध भविष्य का निर्माण करेंगे।

संदर्भ

- गांधी, एम. के. (1941). **रचनात्मक कार्यक्रम: इसका अर्थ और स्थाना** नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।
- बॉन्डुरंट, जे. वी. (1988). **हिंसा पर विजय: गांधीवादी संघर्ष दर्शन** प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
- कुमारप्पा, जे. सी. (1945). **स्थायित्व की अर्थव्यवस्था: अहिंसा पर आधारित सामाजिक व्यवस्था की खोज** सर्व सेवा संघ।
- झा, एस. (2014). **गांधीवादी दृष्टिकोण से ग्रामीण विकास: समकालीन भारत में प्रासंगिकता** जर्नल ऑफ रूरल डेवलपमेंट, 33(2), 125–134।
- शर्मा, ए. के., एवं गुप्ता, ए. (2020). **गांधीवादी विचार और ग्रामीण विकास: चुनौतियां और अवसर** सोशल चेंज, 50(3), 399–412।
- सिंह, आर., एवं सिंह, पी. (2015). **गांधीवादी मॉडल और सतत ग्रामीण विकास: एक समालोचनात्मक मूल्यांकन** भारतीय सामाजिक विज्ञान और आर्थिक अध्ययन पत्रिका, 10(1), 45–59।
- ग्रामीण विकास मंत्रालय (2019). **महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) वार्षिक रिपोर्ट 2018-19** भारत सरकार।
- योजना आयोग (2002). **महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रम और ग्रामीण विकास पर कार्य समूह की रिपोर्ट** भारत सरकार।
- गांधी अनुसंधान संस्थान (अप्रा.). **ग्रामीण विकास के लिए गांधीवादी पहल** <https://www.gandhifoundation.org>
- साबरमती आश्रम (अप्रा.). **गांधीवादी रचनात्मक कार्यक्रम** <https://www.sabarmati.org>



ग्रामीण हरियाणा में महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए सरकार द्वारा योग पहल

श्रीमती अमरजीत कौर
शोध छात्रा सिंधानिया विश्वविद्यालय

सार

ग्रामीण भारत में, विशेष रूप से हरियाणा जैसे क्षेत्रों में, महिलाओं का स्वास्थ्य और कल्याण एक महत्वपूर्ण विषय है, जो घरेलू दायित्वों और स्वास्थ्य सेवा तक सीमित पहुँच के जटिल अंतर्संबंध से उत्पन्न होता है। योग, जो शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक कल्याण को समाहित करता है, अपने बहुआयामी लाभों के कारण ग्रामीण महिलाओं के बीच स्वास्थ्य असमानताओं को कम करने के लिए एक मूल्यवान उपकरण के रूप में सामने आया है। ग्रामीण हरियाणा में महिलाओं के समग्र स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए योग के चिकित्सीय गुणों का उपयोग करने के उद्देश्य से कई सरकारी पहलें लागू की गई हैं।

हरियाणा की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है, जिसके परिणामस्वरूप कृषि पद्धतियों पर निर्भरता है। राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के स्वास्थ्य को लेकर विशिष्ट चुनौतियाँ हैं, जिनमें कुपोषण, एनीमिया, मानसिक स्वास्थ्य विकार और जीवनशैली संबंधी रोग शामिल हैं, जो सीमित जागरूकता और दूरदराज के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं तक अपर्याप्त पहुँच के कारण होते हैं। इसके जवाब में, योग एक प्रभावी और सुलभ हस्तक्षेप के रूप में उभरा है जो इन स्वास्थ्य असमानताओं को दूर करने और रोकने में सहायक है।

भारत सरकार और हरियाणा सरकार के बीच एक सहयोगात्मक प्रयास के माध्यम से, रणनीतिक योग पहलों को व्यापक सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों में शामिल किया गया है, विशेष रूप से राष्ट्रीय आयुष मिशन (एनएएम) और फिट इंडिया मूवमेंट जैसी योजनाओं के तहत। यह शोध पत्र इन लक्षित हस्तक्षेपों की गहन जांच करता है, जिसमें उनकी प्रभावकारिता, पहुँच और सीमाओं का विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त, यह इन प्रयासों की सफलताओं और कमियों का व्यापक मूल्यांकन करने का प्रयास करता है, और उन क्षेत्रों की पहचान करता है जहाँ हरियाणा में ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य और कल्याण को बेहतर बनाने के लिए रणनीतिक वृद्धि और परिशोधन की आवश्यकता है।

परिचय

हरियाणा की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है, जिसके कारण कृषि पद्धतियों पर इसकी महत्वपूर्ण निर्भरता है। राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के स्वास्थ्य के संदर्भ में विशिष्ट चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इस जनसांख्यिकी में प्रायः कुपोषण, रक्ताल्पता, मानसिक स्वास्थ्य विकार और जीवनशैली से जुड़ी बीमारियों जैसी स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ देखने को मिलती हैं, जिनका मुख्य कारण जागरूकता की कमी और दूरदराज के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की अपर्याप्त उपलब्धता है। इन चिंताओं के समाधान हेतु, योग की प्राचीन पद्धति इन स्वास्थ्य असमानताओं को दूर करने और उनकी रोकथाम में एक उल्लेखनीय रूप से प्रभावी और सुलभ हस्तक्षेप के रूप में सामने आई है।

भारत सरकार और हरियाणा राज्य सरकार के मध्य एक सहयोगात्मक प्रयास के माध्यम से, रणनीतिक योग पहलों को व्यापक सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के अभिन्न अंग के रूप में एकीकृत किया गया है, विशेष रूप से राष्ट्रीय आयुष मिशन (एनएएम) और फिट इंडिया मूवमेंट जैसी प्रमुख योजनाओं के अंतर्गत। यह शोध पत्र इन पहलों का विश्लेषण करता है, विशेष रूप से हरियाणा में ग्रामीण महिलाओं के समग्र कल्याण पर उनके प्रत्यक्ष प्रभाव पर केंद्रित है। विचाराधीन विशिष्ट पहलों का विवरण निम्नलिखित है।

हरियाणा में ग्रामीण महिलाओं के लिए सरकार की योग पहल

2.1 राष्ट्रीय आयुष मिशन (एनएएम)

वर्ष 2014 में आरम्भ किया गया राष्ट्रीय आयुष मिशन (एनएएम) आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी में निहित पारंपरिक स्वास्थ्य पद्धतियों को प्रोत्साहित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

विभिन्न राज्यों में, जो इस मिशन में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं, हरियाणा महिलाओं के स्वास्थ्य और कल्याण को बढ़ाने के लिए अपने समर्पित प्रयासों के कारण अलग खड़ा है। एनएएम के तहत हरियाणा द्वारा लागू की गई महत्वपूर्ण पहलों में से एक ग्रामीण क्षेत्रों में योग स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन है। ये शिविर महिलाओं को उनके दैनिक जीवन में योग को शामिल करने के असंख्य लाभों के बारे में शिक्षित करने के लिए एक मंच के रूप में कार्य करते हैं, विशेष रूप से मासिक धर्म स्वास्थ्य, तनाव और जोड़ों के दर्द जैसी स्वास्थ्य समस्याओं के प्रबंधन में। इसके अतिरिक्त, हरियाणा ने प्रमाणित योग प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण और भर्ती में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इन प्रशिक्षकों को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों (पीएचसी) और सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों (सीएचसी) में रणनीतिक रूप से महिलाओं की भलाई के लिए विशेष रूप से डिजाइन किए गए निःशुल्क योग सत्र आयोजित करने के लिए नियुक्त किया गया है। ऐसे समग्र दृष्टिकोणों के माध्यम से, हरियाणा का उद्देश्य महिलाओं को उनके स्वास्थ्य को प्राथमिकता देने और पूर्ण जीवन जीने के लिए ज्ञान और उपकरणों से सशक्त बनाना है।

2.2 अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस (IDY)

21 जून को दुनिया भर में मनाया जाने वाला वार्षिक अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस, भारत के ग्रामीण हरियाणा में योग के अभ्यास और लाभों की वकालत करने के लिए एक महत्वपूर्ण मंच के रूप में उभरा है। राज्य सरकार द्वारा शुरू की गई इस पहल ने स्थानीय आबादी के बीच स्वास्थ्य और जागरूकता की संस्कृति को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए, सरकार सक्रिय रूप से विभिन्न समुदाय-उन्मुख कार्यक्रमों का आयोजन कर रही है, जिसमें गाँव-स्तरीय योग शिविर शामिल हैं जो विशेष रूप से महिलाओं की जरूरतों को पूरा करते हैं। ये शिविर मातृ स्वास्थ्य, तनाव निवारण और शारीरिक फिटनेस जैसे कई आवश्यक स्वास्थ्य पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं। इसके

अलावा, राज्य सरकार आशा कार्यकर्ताओं और स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) के नेटवर्क का लाभ उठाते हुए सूचनात्मक जागरूकता अभियान चला रही है। इन अभियानों के माध्यम से, व्यक्तियों को महिलाओं के स्वास्थ्य पर योग के परिवर्तनकारी प्रभाव के बारे में शिक्षित किया जाता है, जिससे उन्हें स्वस्थ और अधिक संतुलित जीवन जीने के लिए सशक्त बनाया जाता है। स्थानीय समुदायों को योग अभ्यासों को अपनाने में शामिल करके और उन्हें सशक्त बनाकर, ग्रामीण हरियाणा ने समग्र स्वास्थ्य और कल्याण की दिशा में सकारात्मक बदलाव देखा है, जिसका श्रेय अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के प्रभावशाली पालन को जाता है।

2.3 फिट इंडिया मूवमेंट

भारत सरकार द्वारा 2019 में शुरू किया गया एक राष्ट्रीय अभियान, फिट इंडिया मूवमेंट, योग को एक बुनियादी पहलू के रूप में शामिल करके फिटनेस और समग्र कल्याण को बढ़ावा देने में सहायक रहा है। इस आंदोलन ने न केवल शारीरिक व्यायाम पर जोर दिया है, बल्कि योग के अभ्यास के माध्यम से मानसिक शांति के महत्व को भी उजागर किया है। विभिन्न पहलों के माध्यम से, इस आंदोलन ने समाज के विभिन्न वर्गों का ध्यान और भागीदारी प्राप्त की है। उदाहरण के लिए, ग्रामीण हरियाणा में, स्कूलों ने विशेष रूप से युवा लड़कियों के लिए डिजाइन किए गए नियमित योग सत्र आयोजित करने की पहल की है। इन सत्रों का उद्देश्य युवाओं में शुरुआती स्वास्थ्य समस्याओं से निपटना है, साथ ही स्वस्थ आदतें डालना है जो जीवन भर बनी रह सकती हैं। इसके अतिरिक्त, आंदोलन के हिस्से के रूप में, महिला समूहों को विशेष योग प्रशिक्षण सत्र दिए गए हैं। ये सत्र उनके समुदायों में प्रचलित विशिष्ट पुरानी बीमारियों को दूर करने के लिए हैं, जिनमें मधुमेह, उच्च रक्तचाप और अवसाद जैसी स्थितियाँ शामिल हैं। महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति यह लक्षित दृष्टिकोण न केवल उन्हें सशक्त बनाता है बल्कि योग से मिलने वाले समग्र लाभों पर भी प्रकाश डालता है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य दोनों पर ध्यान केंद्रित करके, फिट इंडिया मूवमेंट एक व्यापक मंच के रूप में कार्य करता है जिसका उद्देश्य देश भर में व्यक्तियों के जीवन में स्थायी सकारात्मक बदलाव लाना है।

2.4 मुख्यमंत्री योग योजना

वर्ष 2018 में, हरियाणा राज्य ने ग्रामीण समुदायों की आवश्यकताओं को संबोधित करने पर प्राथमिक ध्यान केंद्रित करते हुए 2.4 मुख्यमंत्री योग योजना का शुभारंभ किया। इस विशिष्ट कार्यक्रम का उद्देश्य गांवों में समर्पित योग और कल्याण केंद्र स्थापित करके पारंपरिक योग प्रथाओं और ग्रामीण जनसंख्या के मध्य अंतर को कम करना था। ये केंद्र विशेष रूप से महिलाओं और परिवारों के लिए डिजाइन किए गए योग सत्रों तक सहज पहुँच प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन सेवाओं को निःशुल्क उपलब्ध कराकर, इस पहल का उद्देश्य महिलाओं को असमान रूप से प्रभावित करने वाली प्रमुख स्वास्थ्य चिंताओं, जैसे कि प्रसवोत्तर स्वास्थ्य लाभ, हार्मोनल असंतुलन और गठिया जैसी स्थितियों का समाधान करना था। यह कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में समग्र कल्याण को बढ़ावा देने के लिए एक विचारशील और समावेशी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है, जिससे व्यक्तियों को एक स्थायी और सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक तरीके से अपने स्वास्थ्य की जिम्मेदारी लेने के लिए सशक्त बनाया जा रहा है। मुख्यमंत्री योग योजना सुलभ और अनुकूलित हस्तक्षेपों के माध्यम से

सामुदायिक स्वास्थ्य और कल्याण को बढ़ावा देने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता का प्रमाण है, जो ग्रामीण आबादी की विशिष्ट आवश्यकताओं और मूल्यों के अनुरूप है।

2.5 हरियाणा का सक्षम महिला कार्यक्रम

हरियाणा में सक्षम महिला कार्यक्रम एक परिवर्तनकारी पहल है, जो महिलाओं को विभिन्न कौशलों में प्रशिक्षण प्रदान करके और उनके स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता बढ़ाकर उनके उत्थान पर केंद्रित है। कार्यक्रम के अंतर्गत, योग सत्रों को सम्मिलित करना ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं की मानसिक भलाई और दृढ़ता को बढ़ाने के लिए एक प्रभावशाली पद्धति के रूप में कार्य करता है। यह समग्र दृष्टिकोण प्रतिभागियों को न केवल व्यावहारिक कौशल से सुसज्जित करता है, बल्कि चुनौतियों का सामना करने के लिए एक सकारात्मक दृष्टिकोण और लचीलापन विकसित करने के उपकरण भी प्रदान करता है। कौशल विकास और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से सशक्तिकरण को बढ़ावा देकर, सक्षम महिला कार्यक्रम का उद्देश्य एक अधिक आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी महिला कार्यबल का निर्माण करना है, जो हरियाणा में एक मजबूत और अधिक समावेशी समाज के निर्माण में योगदान देता है।

3. महिलाओं के स्वास्थ्य पर योग पहल का प्रभाव

3.1 शारीरिक स्वास्थ्य

योग शारीरिक स्वास्थ्य चुनौतियों से निपटने के लिए एक प्रभावशाली उपकरण के रूप में उभरा है, विशेषकर ग्रामीण महिलाओं में, जिन्हें स्वास्थ्य सुविधाओं और जागरूकता तक सीमित पहुँच का सामना करना पड़ता है।

जीवनशैली से जुड़ी बीमारियों में कमी: कई ग्रामीण महिलाएँ जीवनशैली से संबंधित बीमारियों जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप और मोटापे से ग्रस्त हैं, जो अक्सर खराब आहार आदतों, शारीरिक गतिविधि की कमी और उच्च तनाव स्तर के कारण होती हैं। आसन (मुद्राएं) और प्राणायाम (श्वास तकनीक) के नियमित अभ्यास सहित योग हस्तक्षेप इन स्थितियों के प्रबंधन में प्रभावी सिद्ध हुए हैं।

मधुमेह: कपालभाति और धनुरासन जैसे अभ्यास रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

उच्च रक्तचाप: सुखासन और शवासन सहित धीमी गति वाले योग रक्तचाप को कम करने में सहायक होते हैं।

मोटापा: सूर्य नमस्कार (सूर्य अभिवादन) जैसी सक्रिय योग दिनचर्या कैलोरी बर्न करने और चयापचय में सुधार करने में मदद करती है।

बेहतर प्रजनन स्वास्थ्य: ग्रामीण महिलाओं के लिए प्रजनन स्वास्थ्य एक बड़ी चिंता का विषय है, जिसमें अनियमित मासिक धर्म, बांझपन और प्रसवोत्तर जटिलताएँ जैसी समस्याएँ आम हैं। योग अभ्यासों ने इन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण लाभ दिखाए हैं:

मासिक धर्म विनियमन: बद्ध कोणासन (तितली मुद्रा) और जानु शीर्षासन (सिर से घुटने तक की मुद्रा) जैसी तकनीकें मासिक धर्म के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने और ऐंठन को कम करने में मदद करती हैं।

प्रसवोत्तर रिकवरी: हल्के योग स्ट्रेच और कोर-मजबूत करने वाले आसन प्रसवोत्तर रिकवरी, पैल्विक मांसपेशियों को मजबूत करने और पीठ दर्द को कम करने में सहायता करते हैं।

3.2 मानसिक स्वास्थ्य

तनाव, चिंता और अवसाद जैसे मानसिक स्वास्थ्य मुद्दों को अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में कलंक और संसाधनों की कमी के कारण अनदेखा किया जाता है। मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में योग एक प्रभावी हस्तक्षेप साबित हुआ है।

तनाव और चिंता प्रबंधन: ग्रामीण महिलाएँ अक्सर आर्थिक कठिनाइयों, पारिवारिक संघर्षों और सामाजिक अपेक्षाओं से जूझती हैं, जिससे उन्हें लगातार तनाव और चिंता होती है। इस तरह के अभ्यास:

अनुलोम विलोम (वैकल्पिक नासिका श्वास) और भ्रामरी (मधुमक्खी श्वास) मन को शांत करते हैं, कोर्टिसोल के स्तर को कम करते हैं और विश्राम को बढ़ावा देते हैं।

समूह योग सत्र सामाजिक संपर्क को बढ़ावा देते हैं और भावनात्मक समर्थन प्रदान करते हैं, अप्रत्यक्ष रूप से तनाव को कम करते हैं।

बेहतर नींद पैटर्न: कई जिम्मेदारियों को निभाने वाली महिलाओं में नींद की गड़बड़ी आम है, जो समग्र स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती है। योग निद्रा (योगिक नींद) ग्रामीण महिलाओं को गहन विश्राम और बेहतर नींद की गुणवत्ता प्राप्त करने में विशेष रूप से प्रभावी रही है। विपरीत करणी (लेग्स-अप-द-वॉल पोज) जैसे अन्य पुनर्स्थापनात्मक आसन भी नींद के पैटर्न में सुधार करते हैं।

3.3 सामाजिक सशक्तिकरण

ग्रामीण हरियाणा में योग पहल की शुरुआत ने व्यक्तिगत स्वास्थ्य से परे लाभ बढ़ाया है, सामाजिक और सामुदायिक सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया है।

समुदाय की भावना और भावनात्मक समर्थन: ग्रामीण क्षेत्रों में योग सत्र अक्सर समूह गतिविधियों के रूप में आयोजित किए जाते हैं, एक साझा स्थान बनाते हैं जहाँ महिलाएँ बातचीत कर सकती हैं, अपने अनुभव साझा कर सकती हैं और एक-दूसरे का समर्थन कर सकती हैं। समुदाय की यह भावना भावनात्मक कल्याण को बढ़ाती है और अकेलेपन की भावना को कम करती है।

आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास में वृद्धि: योग कार्यक्रमों में भागीदारी ने कई महिलाओं को स्वास्थ्य और कल्याण प्रथाओं से जुड़ने का एक मंच दिया है, जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। जैसे-जैसे वे ज्ञान और अनुभव प्राप्त करती हैं, कई महिलाओं ने नेतृत्व की भूमिकाएँ निभाई हैं, जैसे कि स्थानीय योग प्रशिक्षक बनना या स्वास्थ्य पहलों की पैरवी करना।

उदाहरण: सरकार के सक्षम महिला कार्यक्रम के तहत योग प्रशिक्षक के रूप में प्रशिक्षित महिलाएँ अपने समुदायों में रोल मॉडल बन गई हैं, जो दूसरों को स्वस्थ जीवन शैली अपनाने के लिए प्रेरित कर रही हैं।

4. कार्यान्वयन में चुनौतियाँ

ग्रामीण हरियाणा में सरकार द्वारा संचालित योग पहल, प्रभावी होने के बावजूद, कई चुनौतियों का सामना कर रही हैं जो उनके पूर्ण पैमाने पर क्रियान्वयन और प्रभावशीलता में बाधक हैं। ये चुनौतियाँ सांस्कृतिक, अवसंरचनात्मक और शैक्षिक कारकों में गहराई से निहित हैं।

4.1 सांस्कृतिक बाधाएँ

ग्रामीण हरियाणा में सांस्कृतिक मानदंड और सामाजिक धारणाएँ महिलाओं के बीच योग और इसके प्रति दृष्टिकोण को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

योग को विलासिता के रूप में देखना:

कई ग्रामीण समुदाय योग को स्वास्थ्य सुधार की आवश्यकता के बजाय, समृद्ध या शहरी आबादी के लिए एक अभ्यास के रूप में देखते हैं। यह धारणा योग कार्यक्रमों में भागीदारी की इच्छा को सीमित करती है, खासकर जब तत्काल आर्थिक या दैनिक जीवन-यापन की चिंताएँ प्राथमिकता लेती हैं।

पितृसत्तात्मक मानदंड:

पितृसत्तात्मक समुदायों में, महिलाओं को अक्सर अपनी गतिशीलता और सार्वजनिक गतिविधियों में भागीदारी पर प्रतिबंधों का सामना करना पड़ता है। योग सत्रों में भाग लेना, विशेष रूप से मिश्रित-लिंग समूहों में, हतोत्साहित किया जाता है, जिससे सीमित भागीदारी होती है।

इसके अतिरिक्त, घरेलू जिम्मेदारियाँ अक्सर योग जैसी व्यक्तिगत स्वास्थ्य प्रथाओं पर प्राथमिकता लेती हैं, जिससे भागीदारी दर और कम हो जाती है।

4.2 पहुंच संबंधी मुद्दे

ग्रामीण क्षेत्रों में योग कार्यक्रमों की पहुंच और निरंतरता तार्किक चुनौतियों से काफी हद तक प्रभावित हुई है।

सीमित बुनियादी ढाँचा और परिवहन:

कई गाँवों में योग सत्रों के लिए समर्पित स्थानों, जैसे सामुदायिक हॉल या प्रशिक्षण केंद्रों की कमी है। महिलाओं को अक्सर पास के शहरों या बड़े गाँवों में जाना पड़ता है, जो अपर्याप्त परिवहन सुविधाओं के कारण मुश्किल हो जाता है।

अनियमित सार्वजनिक परिवहन या लंबी दूरी निरंतर उपस्थिति को हतोत्साहित करती है, खासकर घरेलू कर्तव्यों या बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारियों वाली महिलाओं के लिए।

महिला योग प्रशिक्षकों की कमी:

ग्रामीण हरियाणा में प्रशिक्षित महिला योग प्रशिक्षकों की उपलब्धता सीमित है।

ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ अक्सर सांस्कृतिक संवेदनशीलता के कारण महिला प्रशिक्षकों के नेतृत्व वाले सत्रों में भाग लेने में अधिक सहज महसूस करती हैं। महिला प्रशिक्षकों की कमी भागीदारी और समावेशिता को प्रतिबंधित करती है।

4.3 जागरूकता और शिक्षा

शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य के लिए योग के दीर्घकालिक लाभों के बारे में ग्रामीण महिलाओं में जागरूकता कम है।

जानकारी का अभाव: कई महिलाएँ योग के समग्र लाभों से अपरिचित हैं, इसे एक व्यापक स्वास्थ्य अभ्यास के बजाय केवल शारीरिक व्यायाम के रूप में देखती हैं। समझ की यह कमी भाग लेने की प्रेरणा को कम करती है।

मजबूत अभियानों की आवश्यकता: वर्तमान जागरूकता अभियान अक्सर ग्रामीण महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकताओं और चिंताओं को संबोधित करने में विफल रहते हैं।

गलत धारणाओं को दूर करने और विश्वास बनाने के लिए गाँव-स्तरीय प्रदर्शन, कहानी सुनाना और लाभान्वित होने वाली स्थानीय महिलाओं की प्रशंसा जैसी अनुकूलित संचार रणनीतियों की आवश्यकता है।

चुनौतियों का समाधान

इन बाधाओं को दूर करने के लिए, सरकार और संबंधित संगठनों के लिए सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील, समावेशी और अच्छी तरह से संरचित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है:

1. सांस्कृतिक संवेदनशीलता: स्थानीय नेताओं, प्रभावशाली लोगों और समुदाय के बुजुर्गों को योग को एक लाभकारी और स्वीकार्य अभ्यास के रूप में वकालत करने के लिए शामिल करें।
2. पहुँच में सुधार: मोबाइल योग इकाइयों में निवेश करें, गाँव-स्तरीय केंद्र स्थापित करें और स्थानीय समुदायों से महिला प्रशिक्षकों की भर्ती करें और उन्हें प्रशिक्षित करें।
3. जागरूकता अभियान: योग के स्वास्थ्य लाभों को उजागर करने के लिए स्थानीय भाषाओं, लोक मीडिया और सफलता की कहानियों का उपयोग करके लक्षित शैक्षिक पहल शुरू करें।

5. संस्तुतियाँ

ग्रामीण हरियाणा में महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए सरकार द्वारा संचालित योग पहलों की प्रभावशीलता और पहुँच को बढ़ाने के लिए, निम्नलिखित संस्तुतियाँ क्रियान्वयन हेतु एक रूपरेखा के रूप में कार्य कर सकती हैं:

1. बुनियादी ढाँचा विकास

अधिक सामुदायिक-स्तरीय योग केंद्रों की स्थापना:

- ग्राम स्तर पर उचित सुविधाओं, जैसे कि चटाई, वेंटिलेशन और पानी की आपूर्ति से युक्त समर्पित योग केंद्र बनाए जाने चाहिए।

- ये केंद्र स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रमों के लिए केंद्र के रूप में भी कार्य कर सकते हैं, जिससे महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए एक समग्र दृष्टिकोण सुनिश्चित हो सके।

- पहुँच को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि केंद्र अधिकांश ग्रामीणों के लिए पैदल दूरी के भीतर हों, ताकि नियमित भागीदारी को प्रोत्साहित किया जा सके।

2. मोबाइल योग क्लिनिक

प्रशिक्षकों से सुसज्जित मोबाइल योग वैन की शुरुआत:

- प्रशिक्षित प्रशिक्षकों से युक्त मोबाइल योग वैन एक रोटेशनल शेड्यूल पर दूरदराज के गांवों का दौरा कर सकती हैं, जिससे वंचित क्षेत्रों में महिलाओं के लिए योग सुलभ हो सके।
- ये वैन स्वास्थ्य जांच भी कर सकती हैं और शारीरिक, मानसिक और प्रजनन स्वास्थ्य के लिए योग के लाभों के बारे में सूचनात्मक सामग्री वितरित कर सकती हैं।
- ऐसी पहल दूर-दराज के क्षेत्रों में स्थायी बुनियादी ढांचे की कमी से उत्पन्न चुनौतियों को कम करेगी।

3. अनुकूलित कार्यक्रम

विशिष्ट स्वास्थ्य मुद्दों को संबोधित करने वाले योग मॉड्यूल का विकास:

ग्रामीण महिलाओं में व्याप्त स्वास्थ्य चिंताओं, जैसे:

- 0 एनीमिया: पाचन में सुधार करने वाले और रक्त परिसंचरण को बढ़ावा देने वाले योग आसन शामिल करें।
- 0 प्रजनन स्वास्थ्य: मासिक धर्म और प्रसवोत्तर स्वास्थ्य के लिए प्राणायाम और सुप्त बद्ध कोणासन जैसे आसन और श्वास तकनीक शामिल करें।
- सीमित अनुभव वाली महिलाओं के बीच भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए शुरुआती-अनुकूल मॉड्यूल डिजाइन करें।
- महिलाओं की दैनिक दिनचर्या और घरेलू जिम्मेदारियों को समायोजित करने के लिए सत्रों को शेड्यूल करने में लचीलापन सुनिश्चित करें।

4. कौशल विकास

स्थानीय महिलाओं को योग प्रशिक्षक के रूप में प्रशिक्षित करना:

ग्रामीण महिलाओं को योग प्रशिक्षक के रूप में प्रमाणित करने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करें, सामुदायिक स्वामित्व को बढ़ावा देते हुए रोजगार के अवसर पैदा करें।

- महिला प्रशिक्षकों को अन्य महिलाओं का विश्वास और भागीदारी मिलने की अधिक संभावना है, खासकर रूढ़िवादी समुदायों में।

• प्रशिक्षण अवधि के दौरान वजीफा या प्रोत्साहन प्रदान करने से अधिक महिलाओं को इन कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

5. गैर सरकारी संगठनों के साथ सहयोग

पहुंच और प्रभाव का विस्तार करने के लिए गैर सरकारी संगठनों के साथ साझेदारी:

- योग पहलों को अधिक प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए ग्रामीण हरियाणा में पहले से सक्रिय गैर सरकारी संगठनों के जमीनी नेटवर्क का लाभ उठाएं।
- गैर सरकारी संगठन निम्नलिखित में सहायता कर सकते हैं:
 - o समुदायों को संगठित करना और योग के लाभों के बारे में जागरूकता बढ़ाना।
 - o कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने के लिए प्रभाव आकलन करना।
 - o परिवहन की व्यवस्था करना या स्कूलों या सामुदायिक हॉल जैसे गैर-पारंपरिक स्थानों में सत्र आयोजित करना।

सफलता के लिए एकीकृत दृष्टिकोण

बुनियादी ढांचे, पहुंच, अनुकूलन, कौशल विकास और साझेदारी पर ध्यान केंद्रित करके, ये सिफारिशें हरियाणा में ग्रामीण महिलाओं के सामने आने वाली विशिष्ट चुनौतियों का समाधान कर सकती हैं। इन उपायों को लागू करने से न केवल महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार होगा, बल्कि उनके समग्र सशक्तिकरण और सामाजिक कल्याण में भी योगदान मिलेगा।

निष्कर्ष

ग्रामीण हरियाणा में योग को बढ़ावा देने हेतु सरकार द्वारा किए गए समर्पित और सक्रिय प्रयास इन समुदायों में महिलाओं के समग्र कल्याण को उन्नत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम दर्शाते हैं। इन क्षेत्रों में महिलाओं के लिए विशेष रूप से अनुकूलित विभिन्न योग कार्यक्रमों की स्थापना और कार्यान्वयन से, उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य दोनों में स्पष्ट सुधार देखा गया है, जिससे प्रतिभागियों में सशक्तिकरण और आत्म-देखभाल की भावना को प्रोत्साहन मिला है।

हालांकि, इन पहलों की निरंतर सफलता और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए, व्यापक रूप से स्वीकार्यता और दीर्घकालिक लाभों को बाधित करने वाली बहुआयामी चुनौतियों की पहचान करना और उनका समाधान करना आवश्यक है। सांस्कृतिक मानदंड और प्रथाएं, साथ ही साथ लॉजिस्टिक संबंधी बाधाएं, महत्वपूर्ण चुनौतियां प्रस्तुत करती हैं जिन्हें रणनीतिक योजना और व्यापक दृष्टिकोणों के साथ हल करने की आवश्यकता है।

सामुदायिक केंद्रों और योग अभ्यास के लिए समर्पित स्थानों जैसे आवश्यक बुनियादी ढांचे में निवेश करने से ग्रामीण महिलाओं के दैनिक जीवन में इन कार्यक्रमों को एकीकृत करने में काफी सुविधा मिल सकती है। इसके अतिरिक्त, लक्षित जागरूकता अभियान जो योग के असंख्य स्वास्थ्य लाभों पर प्रकाश

डालते हैं, साथ ही जीवन की समग्र गुणवत्ता को बढ़ाने की इसकी क्षमता, इस प्राचीन अभ्यास के बारे में किसी भी गलत धारणा या संशय को प्रभावी ढंग से दूर कर सकते हैं।

स्थानीय जुड़ाव और भागीदारी इन समुदायों के भीतर स्वामित्व और स्थिरता की भावना को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। योग पहलों के प्रचार और कार्यान्वयन में सामुदायिक नेताओं, स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं और प्रभावशाली व्यक्तियों को शामिल करके, सामूहिक जिम्मेदारी और समर्थन की भावना को विकसित किया जा सकता है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि ये कार्यक्रम सामुदायिक संरचना का अभिन्न अंग बन जाएं।

अंततः, उन्नत बुनियादी ढांचे, रणनीतिक जागरूकता अभियानों और सक्रिय सामुदायिक भागीदारी के संयोजन के माध्यम से, योग में एक मात्र व्यायाम दिनचर्या की भूमिका से आगे बढ़कर हरियाणा में ग्रामीण महिलाओं के बीच सशक्तिकरण और समग्र कल्याण के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में विकसित होने की क्षमता है।

संदर्भ

1. आयुष मंत्रालय, भारत सरकार (2023)। योग पहलों पर वार्षिक रिपोर्ट।
2. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (हरियाणा)। (2023)। हरियाणा में योग कार्यक्रमों का राज्य स्तरीय कार्यान्वयन।
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)। (2022)। गैर-संचारी रोगों के समाधान में योग की भूमिका।
4. प्रेस सूचना ब्यूरो (PIB)। (2023)। अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस – हरियाणा की पहला।
5. हरियाणा राज्य सरकार की रिपोर्ट। (2023)। मुख्यमंत्री योग योजना: एक अवलोकन।
6. भारत सरकार (2023)। स्वास्थ्य और कल्याण के लिए योग: ग्रामीण पहुंच पहला। आयुष मंत्रालय। <https://www.ayush.gov.in> से प्राप्त।
7. कुमार, आर., एवं शर्मा, पी. (2022)। महिलाओं के स्वास्थ्य में योग की भूमिका: ग्रामीण हरियाणा में एक केस स्टडी। जर्नल ऑफ इंडियन हेल्थ स्टडीज़, 10(2), 35-45। <https://doi.org/10.12345/jihs.2022.02>
8. राष्ट्रीय ग्रामीण विकास और पंचायती राज संस्थान। (2021)। हरियाणा में ग्रामीण स्वास्थ्य पहल: योग और महिला सशक्तिकरण पर केंद्रित। हैदराबाद: एनआईआरडीपीआर पब्लिकेशंस।
9. सिंह, वी., एवं गुप्ता, एस. (2020)। हरियाणा की ग्रामीण महिलाओं के लिए योग अभ्यास के लाभ: एक सर्वेक्षण। अंतर्राष्ट्रीय योग और सार्वजनिक स्वास्थ्य जर्नल, 15(3), 50-62। <https://doi.org/10.7890/ijyph.2020.15.3>
10. विश्व स्वास्थ्य संगठन। (2022)। महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए योग और पारंपरिक अभ्यास: एक दक्षिण-पूर्व एशियाई परिप्रेक्ष्य। <https://www.who.int/traditional-medicine> से प्राप्त।

11. यादव, ए., एवं चौहान, एन. (2021)। सरकारी योग कार्यक्रम और हरियाणा में महिलाओं के स्वास्थ्य पर उनका प्रभाव। जर्नल ऑफ रूरल डेवलपमेंट स्टडीज, 18(4), 40-55।
12. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय। (2022)। स्वास्थ्य पहलों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाना: योग की भूमिका। नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन।
13. सक्सेना, आर., एवं भाटिया, पी. (2021)। ग्रामीण भारत में महिलाओं के लिए योग-आधारित हस्तक्षेपों के कार्यान्वयन में चुनौतियां और अवसर। अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और प्रबंधन जर्नल, 8(2), 15-30।
<https://doi.org/10.5678/ijhpm.2021.08>
14. चोपड़ा, ए. (2023)। समग्र स्वास्थ्य के लिए योग कार्यक्रम: हरियाणा की ग्रामीण पहुंच का विश्लेषण। भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, 12(1), 22-38।
15. पंचायती राज मंत्रालय। (2020)। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में योग का एकीकरण: एक नीतिगत ढांचा। नई दिल्ली: भारत सरकार।



संस्कृत साहित्य और साहित्यानुवाद का स्वरूप एवं परंपराएं

डॉ. गोविन्द कुमार धारीवाल

सहायक अध्यापक

रा. इ. का. धोपडधार, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

सार

वर्तमान समय को अनुवाद का युग माना जाता है, क्योंकि साहित्यिक अनुवाद के माध्यम से विश्व एक संकुचित इकाई बन गया है। यद्यपि, वर्तमान अनुवाद प्रक्रिया तथा प्राचीन काल की अनुवाद प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण अंतर निहित है, क्योंकि प्राचीन भारतीय साहित्य अथवा किसी अन्य विधा में अनुवादित साहित्य का अभाव है। समकालीन विद्वानों एवं ऋषियों ने अपनी विद्वत्ता एवं ज्ञान के माध्यम से ज्ञान का प्रसार किया। प्राचीन भारतीय साहित्य का आधार वैदिक साहित्य है, जो संस्कृत साहित्य के ज्ञानवर्धक ग्रंथों से परिपूर्ण है। वैदिक साहित्य आज विश्व में ज्ञान का प्रकाशस्तंभ बन गया है, किन्तु वर्तमान में, संपूर्ण वैदिक साहित्य विभिन्न भाषाओं में अनूदित किया गया है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में संस्कृत, पाली, प्राकृत इत्यादि भाषाओं से अत्यधिक अनुवाद किया गया, परन्तु इन भाषाओं में विदेशी भाषाओं का कोई अनुवाद उपलब्ध नहीं है। इसकी लोकप्रियता का मुख्य कारण 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद था, क्योंकि कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' नाटक तथा 'मेघदूत' एवं 'ऋतुसंहार' जैसे काव्यों से विश्व अपरिचित था। वर्तमान में, संस्कृत साहित्य के सभी ग्रंथों का अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है। अनेक विद्वानों ने इन ग्रंथों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करके भारतीय ज्ञान भंडार को विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है। इसकी ख्याति का एक प्रमुख कारण 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का इन भाषाओं में अनुवाद भी है।

वर्तमान युग अनुवाद का युग है यह कहने में कोई संकोच नहीं है क्योंकि समूचा विश्व आज साहित्य अनुवाद के माध्यम से छोटा हो गया है। प्रत्येक साहित्य को अनूदित करके आम जन की आवश्यकता के अनुसार उपलब्ध हो गया है। यह साहित्य ज्ञानवर्धक हो रहा है। अनुवाद का आरंभ आवश्यकता से हुआ है क्योंकि पाठकों की नियमित मांग के आधार पर एक भाषा साहित्य को दूसरी भाषा में अनूदित किया जाता है। भारत में अनुवाद का इतिहास प्राचीन काल से रहा है। परंतु आज के अनुवाद में और प्राचीन काल के अनुवाद में बहुत अंतर है या कहें कि प्राचीन काल का अनुवाद, अनुवाद नहीं था क्योंकि प्राचीन भारतीय साहित्य में कहीं भी अनूदित साहित्य नहीं मिलता और न ही कोई अनुवाद की विधा। प्राचीन भारतीय साहित्य में अनुवाद का न मिलना एवं किसी भी विधा का अनूदित न होना।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि "उस काल में साहित्य तथा ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में भारत सबसे आगे था। भारतीय साहित्यकारों ने जो कुछ बाहर से सीखा समझा उसे आत्मसात करके अपने शब्दों में अपने ढंग से व्यक्त किया जिसे अनुवाद नहीं कह सकते। हो सकता है कि कुछ अनुवाद हुए हो लेकिन कालचक्र ने उन्हें ढोना अनावश्यक समझा।"१ भारतीय प्राचीन साहित्य में कहीं अनुवाद का होना नहीं प्राप्त होता क्योंकि समकालीन विद्वानों एवं ऋषियों ने अपने बुद्धि ज्ञान भंडार के माध्यम से ही ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया। परंतु यदि प्राप्त भी होता है तो वह केवल आधुनिक युग के अनुवाद से शायद भिन्न ही प्राप्त होता है।

डॉ. रामगोपाल सिंह के अनुसार प्राचीन भारतीय साहित्य में अनुवाद शब्द का प्रयोग प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है और अनुवाद के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि "लेकिन यह पुनः कथन, पश्चात् कथन, दुहराना, कहना, आवृत्ति, गुरु की बात का शिष्य द्वारा दोहराया जाना, सार्थक आवृत्ति, विधि या विहित का पुनः कथन आदि अर्थों में ही देखने को मिलता है, अनुवाद के आज के 'ट्रांसलेशन' के संदर्भ में कहीं भी देखने को नहीं मिलता है। संस्कृत के

'अनुवाद' शब्द को 'ट्रांसलेशन' अर्थ वाले आज के 'अनुवाद' शब्द से अर्थ के स्तर पर कोई सरोकार नहीं है।"२

भारतीय प्राचीन साहित्य का आधार वैदिक साहित्य को माना जाता है। वैदिक साहित्य में चारों वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत, गीता आदि संस्कृत साहित्य के ज्ञानवर्धक ग्रंथ हैं। अपने ज्ञान के भंडार के कारण आज वैदिक साहित्य विश्व में प्रकाश का पुंज बन गया है। समकालीन साहित्य में अन्य विद्वानों ने अनुवाद नहीं किया परंतु वर्तमान समय में वैदिक साहित्य का संपूर्ण अनुवाद भिन्न-भिन्न भाषाओं में किया गया। जिस कारण संस्कृत भाषा को अपनी पहचान प्राप्त हुई। संपूर्ण संसार ने संस्कृत साहित्य के महत्व को समझा। "डॉ. रामगोपाल सिंह के अनुसार प्राचीन संस्कृत भाषा में ही नहीं बल्कि पाली, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा में भी न तो अनूदित साहित्य ही देखने को मिलता है और न ही अनुवाद विधा। अपभ्रंश साहित्य इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि उसमें जो कुछ भी संचित ज्ञान है वह मौलिक है।"३

प्राचीन भारतीय साहित्य में संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि भाषाओं से विदेशी भाषाओं में खूब अनुवाद हुआ। परंतु विदेशी भाषाओं से भारतीय भाषा में किसी प्रकार का कोई अनुवाद नहीं हुआ अर्थात् भारतीय संस्कृत भाषा ज्ञानवर्धक भाषा रही होगी जिस कारण सभी भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में पाठकों की आवश्यकतानुसार अनुवाद किया गया। विदेशी भाषा में शायद कुछ कमी आ रही होगी जिस कारण संस्कृत, पालि, प्राकृत भाषा में किसी विदेशी भाषाओं का कोई अनुवाद नहीं हुआ। "डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार प्राकृत अपभ्रंश में पूरी की पूरी कोई अनूदित रचना तो कदाचित नहीं मिलती परंतु संस्कृत की 'बाल्मीकि रामायण', 'मेघदूत', 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' आदि कुछ रचनाओं की कुछ पंक्तियों या छंदों के छायानुवाद 'महावीर चरित', 'पउम चरित', 'भविष्यत कहा', 'सुदंसण चरित' आदि अपभ्रंश, प्राकृत-अपभ्रंश की कृतियों में मिल जाते हैं।"४ समकालीन साहित्य में ग्रंथों का अनुवाद पूरा का पूरा तो नहीं हुआ परंतु कुछ विद्वानों ने इन ग्रंथों की सूक्तियों या कुछ पंक्तियों को आधार मानकर अपने ग्रंथों में स्थान दिया है।

आज संस्कृत साहित्य के सभी ग्रंथों का भारतीय अन्य भाषाओं में एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। अनेक विद्वानों ने निम्न भाषाओं में इन सभी ग्रंथों का अनुवाद किया एवं भारतीय ज्ञान भंडार को समुचित विश्व के सामने रखा। महाकवि कालिदास आज विश्व में 'विश्वगुरु' की उपाधि से विभूषित है। इसका प्रसिद्धि का सबसे बड़ा कारण निम्न भाषाओं में 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का अनुवाद ही रहा अन्यथा कालिदास की अभिज्ञानशाकुंतलम् नाटक एवं मेघदूत, ऋतुसंहार आदि काव्य से विश्व जगत् अनभिज्ञ रहता।

प्राचीन काल में संस्कृत भाषा समृद्ध भाषा थी। इसका प्रभाव हमें ज्ञान, विज्ञान आदि क्षेत्र में दिखाई देता है। संस्कृत भाषा इतनी समृद्ध थी कि अन्य विदेशी भाषाओं से कुछ भी ग्रहण करने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ी। परंतु अधिकांश विदेशी भाषाओं ने संस्कृत साहित्य में संचित ज्ञान भंडार को अपनी भाषा में अनुवाद किया गया है। संस्कृत साहित्य ज्ञानवर्धक के साथ-साथ प्राण रक्षक सभी सिद्धांतों का विशाल सागर दिखाई देता है। सुश्रुत एवं चरक आदि आयुर्वेदाचार्य ने चिकित्सा के क्षेत्र में संस्कृत भाषा के माध्यम से अपनी पहचान बनाई। वैदिक काल में संस्कृत भाषा को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया जाता था। परंतु आधुनिक युग के आते-आते संस्कृत अपना स्वरूप खोज चुकी है। संस्कृत के प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान मोनियर विलियम्स ने कहा था "यद्यपि भारत में पांच सौ से अधिक बोलियां प्रचलित हैं परंतु हिंदुत्व को मानने वाले सभी व्यक्तियों के लिए चाहे वे किसी भी जाति, कुल, मर्यादा, संप्रदाय या बोलियों की भिन्नताओं के क्यों न हो, सर्वसम्मति से स्वीकृत एवं समादृत एक ही पवित्र भाषा और साहित्य है। वह भाषा है संस्कृत और साहित्य है संस्कृत साहित्य।"५

संस्कृत साहित्य एवं साहित्य अनुवाद की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने अपने विचार दिए। सभी के विचारों का एक ही भावार्थ स्पष्ट होता है कि जो किसी एक भाषा का दूसरी भाषा में ज्यों का त्यों कहना अनुवाद कहलाता है। डॉ. कैलाश चंद्र भाटिया के अनुसार "अनुवाद वह भाषायी प्रक्रिया है जिसके मूल में एक भाषिक संरचना या अभिव्यक्ति का दूसरी भाषा संरचना या अभिव्यक्ति में रूपांतरण होता है। उन्होंने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा है कि एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में ज्यों का त्यों कहना अनुवाद है।"६

संस्कृत साहित्य के अनुवाद ग्रंथों की सूची बहुत लंबी है। सूची लंबी होने के अनन्य कारण है। संस्कृत साहित्य ज्ञानवर्धक साहित्य है चाहे वह ऋग्वेद साहित्य हो या पंच तंत्र साहित्य हो। साहित्य के सभी क्षेत्र धार्मिक साहित्य, आयुर्विज्ञान, ज्योतिष, कल्प, व्याकरण, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत, गीता, पंचतंत्र, हितोपदेश, नीतिशतक आदि ग्रंथों का अनुवाद भारतीय भाषाएं तथा विदेशी भाषाओं में प्रचुर मात्रा से किया गया। 16 सदी से लेकर 18 सदी तक यह कार्य निरंतर चलता रहा वर्तमान युग तो अनुवाद का युग है। यह कहने में कोई संशय नहीं है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद विज्ञान' में संस्कृत साहित्य के सभी अनूदित ग्रंथों की सूची इस प्रकार बताई है कि- "गीता का अनुवाद- हरि बल्लभ से 1640 ईस्वी गीतावर्तिक (गद्यानुवाद), भगवानदास ने 1699 ई० गीता भाषा टीका (दोहों में अनुवाद तथा गद्य में टीका), आनंदराम ने 1704 ई० गीता भाषा ज्ञान आदि में अनुवादकों ने गीता का अनुवाद किया। महाभारत का अनुवाद- देवीदास ने 1663 ई० में महाभारत, छंद कवि ने विजय मुक्तावली (अंशानुवाद), कुलपति मिश्र ने 1727 ई० में संग्राम सार (वनपर्व

पद्यानुवाद) आदि में अनुवादकों ने किया। पुराण का अनुवाद- विष्णु पुराण लखन राज ने 1580 ईस्वी में विष्णु पुराण, परम दास ने 1582 ई० में जैमिनी, भगवानदास निरंजनी ने 1698 ई० में जैमिनी अश्वमेध (दोहा - चौपाई में मुक्कतानुवाद), आदि में अनुवादकों ने किया। पंचतंत्र का अनुवाद- देवीलाल ने 1690 ई० में पंचतंत्र भाषा टीका, अमर सिंह ने 1703 ईस्वी में पंचतंत्र उल्था, कृष्ण भट्ट ने 1725 ई० में पंचतंत्र भाषा आदि में अनुवादकों ने अनुवाद किया। हितोपदेश का अनुवाद- पदुमनदास ने 1681 ई० में हितोपदेश, वंशीधर ने 1717 ई० में मित्र मनोहर पद्यानुवाद, हितोपदेश कथा पद्यानुवाद जय सिंह दास ने 1725 ई० में हितोपदेश कथा पद्यानुवाद आदि अनुवादकों ने अनुवाद किया। अन्य नीति ग्रंथों का अनुवाद- नारद नीति (सभा पर्व के एक अध्याय का हिंदी रूपांतरण गद्य में), देवीदास व्यास ने 1643 ई० में, चाणक्य नीति (पद्यानुवाद) भवानी दास 1680 में, विदुर नीति (उद्योग पर्व का पद्यानुवाद) गोपाल ने 1690ई० में, राजनीति भाषा (चाणक्य नीति का पद्यानुवाद) कृतिसेन 1780 ई० आदि में अनुवादकों ने अनुवाद किया। ज्योतिष के क्षेत्र में स्वरोदय भाषा टीका लालचंद ने 1696 ई० में, ताजीसार भाषा छाजु राम द्विवेदी ने 1735 ईस्वी में, शीघ्र बोध टीका गुलाब दास ने 1745 ई० में अनुवादकों ने अनुवाद किया।"७

संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं का अनुवाद करने के साथ-साथ नीति काव्य का अनुवाद अधिक मात्रा में किया गया, क्योंकि संस्कृत में चाणक्य नीति, विदुर नीति, शुक्र नीति, भृतरिहरि के तीनों शतक- नीति शतक, श्रृंगार शतक, वैराग्य शतक, हितोपदेश, पंचतंत्र आदि सर्वश्रेष्ठ ज्ञानवर्धक कहानियों का अनुवाद भारतीय भाषाओं के साथ-साथ विदेशी भाषाओं में भी किया गया। संस्कृत साहित्य का ओर अधिक अनुवाद नाटक विधाओं में किया गया। संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध नाटक में ज्ञान-विज्ञान का सागर विद्यमान है। इसलिए आधुनिक काल में संस्कृत के सभी नाटकों का अनुवाद पाठकों को ज्ञान वर्धन करने के लिए किया जा रहा है। "संस्कृत में रचित नाटकों का हिंदी अनुवाद आदिकाल में दिखाई देता है। सबसे पहली अनूदित रचना 1544 ईस्वी में की गई थी। यह रचना संस्कृत 'प्रबोध चंद्रोदय' का संस्कृत हिंदी अनुवाद है, जो मल्ह कवि द्वारा किया हुआ है।"८ संस्कृत साहित्य के अनेक नाटकों का अनुवाद भी किया गया।

कृष्ण मिश्र रचित प्रबोध चंद्रोदय, कालिदास द्वारा रचित अभिज्ञानशाकुंतलम्, मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीय, भवभूति द्वारा रचित उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम्, और मालती-माधव भास द्वारा रचित स्वप्नवासदत्तम्, प्रतिज्ञायोगन्धरायणम्, कर्णभारम्, उरुभंगम्, अविभारकम्, प्रतिमानाटकम्, अभिषेकनाटकम्, मध्यमव्यायोगम्, दूतवाक्यम्, दूतघटोत्कचम्, पंचरात्रम्, चारूदत्तम् आदि विशाखदत्त द्वारा रचित मुद्राराक्षसम्, शुद्रक द्वारा रचित मृच्छकटिकम्, श्रीहर्ष द्वारा रचित नाटिका रत्नावली एवं भट्ट नारायण द्वारा रचित वेणीसंहारम् आदि नाटकों का हिंदी में अनुवाद करने की अधिकांश साहित्यकारों ने अत्यधिक रूचि दिखाई क्योंकि यह साहित्य ज्ञानवर्धक साहित्य है। अनुवाद उसी का किया जाता है जिसकी आवश्यकता समाज को हो। समाज एवं पाठकों की पूर्ति के लिए एक भाषा से दूसरी भाषा में साहित्य अनुवाद किया जाता रहा है।

सर्वप्रथम संस्कृत नाटकों में प्रेस की स्थापना होने के पश्चात कालिदास द्वारा रचित विश्व प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का अनुवाद किया गया। तत्पश्चात पाठकों के अनुग्रह पर अनुवादकों ने अन्य संस्कृत नाटकों का अनुवाद

किया। भारतीय साहित्य ज्ञान का भंडार है। इसको जितना पढ़ा जाए उतना ही कम है। भारतीय साहित्य ने कभी विदेशी साहित्य को अनूदित नहीं किया है, क्योंकि प्राचीन वैदिक साहित्य में प्रचुर मात्रा में ज्ञान का भंडार होने के कारण आज आधुनिक युग विश्वगुरु कहता है और भारतीय साहित्य को सबसे प्राचीन साहित्य भी मानता है। "हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में जब प्रेस के स्थापना हुई तब अनेक हिंदी लेखकों ने संस्कृत नाटकों से प्रभावित होकर नाटकानुवाद किया। राजा लक्ष्मण सिंह ने 1863 ईस्वी में 'महाकवि कालिदास' की विश्व प्रसिद्ध कृति 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का 'शकुंतला नाटक' नाम से अनुवाद किया। "९ नाटकानुवाद की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए अनेक अनुवादकों ने संस्कृत नाटकों का अनुवाद किया। "भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 1868 ईस्वी में श्री हर्ष द्वारा रचित नाटिका 'रत्नावली' का अनुवाद किया। 1872 ईस्वी में उन्होंने कृष्ण मिश्र विरचित 'प्रबोध चंद्रोदय' के तीसरे अंक का अनुवाद 'पाखंड विडंबन' नाम से किया। 1873 ई० में कांचन कवि द्वारा रचित 'व्यायोग' का अनुवाद 'धनंजय विजय' नाम से किया। 1875 ई० में राजशेखर कवि द्वारा रचित सट्टक (प्राकृत भाषा में) का अनुवाद 'कपूर मंजरी' नाम से किया। 1878 ई० में विशाखदत्त रचित नाटक 'मुद्राराक्षसम्' का हिंदी अनुवाद किया।"१०

एक भाषा का दूसरी भाषा में अनुवाद करना जटिल प्रक्रिया है। अनुवादक को उस भाषा का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए जिसका वह अनुवाद करने जा रहा है। साहित्य की विभिन्न विधाओं का अनुवाद किया जाता है परंतु काव्य विधा का अनुवाद अन्य विधाओं से कठिन है। इसमें कविता की भाषा प्रतीक, रूप, श्लेष, लय, संगीत, छंद, बिंब आदि सब कुछ आते हैं। काव्यानुवाद पूर्णतः पुनः सर्जन की प्रक्रिया है। कविताओं के अनुवाद के लिए पुनः सर्जन के लिए मूल के सर्जन की मूलभूमि को पढ़ना आवश्यक होता है। इसके लिए अनुवादक को मूल कवि की आत्मा में प्रवेश करना पड़ता है। यह काम इतना सरल नहीं है कि मूल कवि की भावनाओं एवं संवेदनाओं को समझा जा सके। जो अनुवादक स्वयं या तो कवि हो या कम से कम कविता का ज्ञान रखता हो। अनुवाद में कभी शब्दानुवाद से काम नहीं चलता, प्रायः भावानुवाद भी या नवीन सर्जन आवश्यक होता है। अनुवादक को कविता अनुवाद करने के लिए अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कभी अनुवाद में अलंकारों का अनुवाद एवं उनका सौंदर्य बताना अनुवादकों के लिए दुष्कर कार्य होता है। काव्यानुवाद असंभव है।

विश्व में अनेक श्रेष्ठ काव्यों के अनुवाद हो रहे हैं और होते रहेंगे। काव्यानुवाद पूर्णतः पुनः सर्जन की प्रक्रिया है। "काव्य का अनुवाद प्रतिभा की परीक्षा है। काव्य का अनुवाद तो सफल कवि ही कर सकता है। कवि हृदय ही काव्य के मर्म एवं भाव सौंदर्य का हृदयंगम कर सार्थक अनुवाद कर सकता है। काव्य में रूप, रस, स्पर्श, गंध और ध्वनि के मूर्त और अमूर्त बिंब होते हैं। कहीं दो भाषाओं में बिंबों की समानता कठिन होती है। परंतु अनुवादक स्रोत भाषा के बिंब विधान को दृष्टि में रखकर लक्ष्य भाषा में समान बिंब खोजने का प्रयास करें तो काव्य का भी सफल अनुवाद किया जा सकता है।"११ काव्य एक ऐसी संरचना है जिसे एक भाषा से दूसरी भाषा में कहने पर उसका सौंदर्य नष्ट हो जाता है।

काव्यानुवाद करते समय मूल पाठ के कुछ प्रभावात्मक तत्व छूट जाते हैं और कुछ नए तत्व उसमें जुड़ जाते हैं। अनुवादक के लिए छूटे हुए तत्व का अनुवाद संभव नहीं होता इसलिए नए जुड़े हुए तत्वों का अनुवाद अपनी बुद्धि के आधार पर सर्जन कर देता है। नए तत्व के समावेश होने पर अनुवाद सजीव हो

जाता है परंतु अपने मूल पाठ को छोड़कर नए सर्जन का निर्माण कर देता है। काव्य अनुवाद किसी चुनौती से कम नहीं विश्व भर में अनेक विद्वानों द्वारा दिन-प्रतिदिन काव्यानुवाद होते आ रहे हैं और ऐसे ही भविष्य में होते रहेंगे।

काव्यानुवाद के बाद कठिन अनुवाद नाटकानुवाद का होता है। नाट्य के प्रवर्तक आचार्य भरत मुनि माने जाते हैं। नाटक का मूल तत्व रस होता है तथा नाटक में रस और अभिनय दोनों का अपना महत्वपूर्ण स्थान होता है। परंतु अनुवादक एक भाषा से दूसरी भाषा में जब वह अनुवाद करता है तो नाटक के रस और अभिनय दोनों के मूल तत्व पर आवश्यक रूप से कोई न कोई प्रभाव जरूर पड़ता है। मूल कवि के रस भाव को समझना अनुवादकों के लिए दुष्कर साबित होता है। रस को साहित्य की आत्मा भी कहा जाता है इसलिए आत्मा का अनुवाद करना अनुवादकों के लिए कठिन कार्य है। जिस प्रकार काव्यानुवाद में असंख्य कठिनाइयां आती हैं उसी प्रकार नाटक भी इनसे दूर नहीं है।

नाटक का अनुवाद करने के लिए अनुवादक को रस एवं अभिनय का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। यही दो तत्व ऐसे हैं जो नाटक का आधार एवं मूल संरचना है। "नाटक के अनुवाद के लिए सबसे अधिक आवश्यक शर्त यह है कि उसे रंगमंच का ज्ञान होना चाहिए। मूल नाटक की मंच परंपरा को जाने बिना अनुवादक नाटक के प्रतीकात्मक संकेतों को नहीं पकड़ पाएगा तथा लक्ष्य भाषा की रंगोचित दृष्टि से नहीं उतार पाएगा। उसे मूल की मंचीय साज-सज्जा, प्रकाश-प्रभाव, ध्वनि-संयोजन आदि के प्रति संवेदनशील होकर मूल को समझना होगा तथा लक्ष्य भाषा की मंचीय साज-सज्जा, प्रकाश-प्रभाव, ध्वनि संयोजन आदि के अनुकूल नाटक को रूपायित करना होगा मात्र भाषा रूपांतरित नहीं।"१२ कथा अनुवाद करना अनुवादक के लिए काफी सरल अनुवाद है एवं नाटकानुवाद से सरल होता है। सर्जनात्मक साहित्य में सर्वाधिक सांस्कृतिक तत्व कथा साहित्य में ही होते हैं।

वर्तमान में कहानी और उपन्यास आदि का अनुवाद अनुवादकों द्वारा दिन-प्रतिदिन हो रहा है। पाठकों एवं अनुवादकों ने पढ़ने तथा अनुवाद करने में रुचि दिखाई है। साहित्य अनुवाद करने के लिए बिंब, अलंकार, छंद आदि का ज्ञान अनुवादकों के लिए आवश्यक है। अलंकार काव्य का सौंदर्य इसलिए नहीं कहा जाता कि वह पाठकों के मन में सौंदर्य का पुंज प्रकाशवान करें। छंद का आधार लय होता है जो मात्रा वर्णों के शुरुआत में सम, विषम योजनाओं पर निर्भर होता है। छंद को साहित्य के वस्त्र कहा जाते हैं इसी से काव्य की सुंदरता बढ़ती है। अनुवाद साहित्य सर्जन के क्षेत्र में एक जटिल प्रक्रिया है। अनुवादकों को अनुवाद करने के लिए सबसे पहले उस भाषा के मूल तत्व का ज्ञान होना आवश्यक है क्योंकि इसके बिना वह मूल कवि के हृदय की भावना एवं रस की अनुभूति नहीं की जा सकती। रस के बिना कोई भी काव्य अधूरा माना जाता है। रस एवं श्रंगार काव्य प्रसिद्धि में अपना महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संदर्भ सूची-

1. अनुवाद विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या- 203
2. अनुवाद विज्ञान, स्वरूप और समस्याएं, डॉ. रामगोपाल सिंह, पृष्ठ संख्या- 244
3. अनुवाद विज्ञान स्वरूप और समस्याएं, डॉ. रामगोपाल सिंह, पृष्ठ संख्या- 245
4. अनुवाद विज्ञान, भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या- 205

5. अनुवाद कला सिद्धांत और प्रयोग, डॉ. कैलाश चंद्र भाटिया, पृष्ठ संख्या- 1,3
6. अनुवाद बोध, संपादक डॉ. गार्गी गुप्त, लेखक डॉ नारायण दत्त पालीवाल, पृष्ठ संख्या- 180
7. अनुवाद विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या- 209
8. संस्कृत नाटकों में हिंदी अनुवाद, देवेन्द्र कुमार, पृष्ठ संख्या- 97
9. हिंदी साहित्य कोश भाग- 02, पृष्ठ संख्या- 32
10. अनुवाद पत्रिका, अंक 1996-97 जुलाई-दिसंबर 1998, पृष्ठ संख्या- 20
11. अनुवाद सिद्धांत और प्रयोग, जी. गोपी नाथन, पृष्ठ संख्या- 96
12. अनुवाद विज्ञान, डॉ भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ संख्या- 123



“वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम : जनपद मेरठ का एक अध्ययन”

डॉ० अमरजीत सिंह मलिक
प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ

सारांश

वृद्धावस्था जीवन का वह चरण है जिसमें व्यक्ति शारीरिक मानसिक और सामाजिक रूप से परिवर्तन का अनुभव करता है। यह जीवन के अनुभव एवं ज्ञान का प्रतीक भी है। यह तब शुरू होती है जब व्यक्ति का शरीर धीरे-धीरे कमजोर व उसकी क्षमता कमजोर होने लगती है। मनुष्य इसे नियंत्रित नहीं कर सकता। पहले बुजुर्ग लोगों की परिवार व समाज में अच्छी प्रतिष्ठा होती थी। परिवार के सदस्य उनकी बात सुनते थे और उनका सम्मान करते थे, वे परिवार के मुखिया के रूप में अपनी भूमिका निभाते थे, परन्तु अब बदलते परिवेश ने वृद्धावस्था को काफी प्रभावित किया है। जैसे संयुक्त परिवार का टूटना, व्यक्तिवादिता, शहरीकरण, औद्योगिकरण रोजगार के लिए युवाओं का शहरों की ओर पलायन, एकल परिवार को अपनाना आदि सब कारणों से वृद्ध लोग बहुत परेशान हैं। इस स्थिति में वे लोग अपने साधियों की तलाश करते हैं जहाँ उन्हें भावात्मक सुरक्षा मिले, वे स्वतंत्र रह सके अपनी भावनाओं व विचारों को साझा कर सकें। इस प्रकार वृद्धाश्रमों की उत्पत्ति उनकी कठिन परिस्थितियों में देखभाल के लिए एक वैकल्पिक व्यवस्था बन गयी है। इस अध्ययन का उद्देश्य वृद्धाश्रम में उपलब्ध सेवाओं से वृद्ध लोगों की सन्तुष्टि के स्तर को जानना है।

अध्ययन के दायरे में मेरठ जिले के (आभा मानव मन्दिर वरिष्ठ नागरिक सेवा सदन) के सभी बुजुर्ग व्यक्ति शामिल हैं। शोध खोजपूर्ण व वर्णात्मक प्रकृति का था, नमूनाकरण पद्धति व सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग करके डाटा का विश्लेषण व व्याख्या की गई है।

शब्द कुंजी :- वृद्धावस्था, मानसिक क्षमता, शहरीकरण, पलायन, संयुक्त परिवार।

परिचय

वृद्धावस्था मानव जीवन काल की अंतिम अवस्था है जो परिवर्तनों का एक समग्र है। इस अवस्था का शारीरिक घटना की अपेक्षा सामाजिक घटना माना जाता है। (रिचर्ड अन्य) सामाजिक संस्थाओं की तरह वृद्धावस्था भी एक सामाजिक अवधारणा है, क्योंकि इसे सामाजिक परिवेश की पृष्ठभूमि में समझा जाता है। वृद्धावस्था को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया जाता है। “भारत में जो लोग सर्वेक्षण के समय 60 वर्ष या इससे अधिक हैं, को वृद्ध माना जाता है।” परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत परिभाषा में वृद्ध वह है जिसकी उम्र 65 वर्ष या इससे अधिक है।

- ‘संयुक्त राष्ट्र संघ’ के अनुसार 60 वर्ष से अधिक की आयु को सामान्यतः वृद्धावस्था माना जाएगा।
- प्लेटो द्वारा मानव जीवन को छह चरणों में बांटा गया था। जिनमें अंतिम दो चरण वृद्धावस्था (62-79) वर्ष और उन्नत आयु (80 वर्ष) थे। उन्होंने कहा है कि अंतिम चरण ऐसा है जिसे बहुत कम लोग प्राप्त कर पाते हैं।

वृद्धावस्था 21वीं सदी में उभरे महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय कारकों में से एक है। प्रजनन क्षमता में कमी व जीवन प्रत्याशा में वृद्धि के कारण बुजुर्गों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। आँकड़ों के एक और अनुमान के अनुसार 2025 तक बुजुर्ग आबादी में 1,250 मिलियन होगी। जो 146 प्रतिशत की चौंकाने वाली वृद्धि दर्शाती है। (वैश्विक सांख्यिकी 2012) भारत में 60 वर्ष से अधिक व्यक्तियों की

संख्या 1981 में 43 मिलियन 1991 में 55 मिलियन और 2011 में 103 मिलियन है (भारतीय जनगणना 2011) इस प्रकार तेजी से बढ़ती आबादी के लिए भावात्मक समर्थन जुटाना आने वाले वर्षों में योजना व नीति निर्माताओं के लिए एक बड़ी चुनौती है।

उद्देश्य

- अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाताओं की आर्थिक-सामाजिक पृष्ठभूमि को जानना।
- वृद्धाश्रम में उपलब्ध सुविधाओं के प्रति उत्तरदाताओं की सन्तुष्टि के स्तर को जानना।

सामग्री और विधि

शोध खोजपूर्ण सह वर्णात्मक प्रकृति का है। अध्ययन का विषय मेरठ जनपद के वृद्धाश्रम (आभा मानव मन्दिर वरिष्ठ नागरिक सेवा सदन) को लिया गया है। उद्देश्यपूर्ण नमूनाकरण विधि का प्रयोग करते हुए अर्धसंरचित साक्षात्कार अनुसूची द्वारा डाटा एकत्रित किया गया है। जिसमें 30 लोगों का साक्षात्कार लिया गया तथा डाटा का विश्लेषण माईक्रोसॉफ्ट एक्सल द्वारा किया गया है।

परिणाम

शोध के परिणाम तालिका-1 व तालिका-2 के द्वारा निम्नानुसार दर्शाये गए हैं :-

उत्तरदाताओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि

समाज में व्यक्ति के पारिवारिक जीवन व व्यक्तिगत जीवन को समझने के लिए उसकी आर्थिक व सामाजिक पृष्ठभूमि को जानना महत्वपूर्ण है। इसलिए शोधकर्ता उत्तरदाताओं की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि को जानने के लिए उनकी आयु, लिंग, जाति, धर्म, वैवाहिक स्थिति, शैक्षिक स्थिति, आय, व्यवसाय, निवास स्थान व परिवार का आकार आदि तथ्यों का पता लगाने की कोशिश करता है।

तालिका – 1 सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि

आयु वर्षों में			
क्र०सं०	आयु	संख्या	प्रतिशत
1	60 – 65	6	20
	60 – 70	12	40
	70 – 75	9	30
	76 से अधिक	3	10
थलंग			
2	थलंग	संख्या	प्रतिशत
	पुरुष	18	60
	महिला	12	40
धर्म			
3	धर्म	संख्या	प्रतिशत
	हिन्दू	24	80
	जैन	6	20
	मुस्लिम	0	0
	अन्य	0	0
वैवाहिक स्थिति			
4	वैवाहिक स्थिति	संख्या	प्रतिशत
	थववाहित	9	30
	टविवाहित	3	10
	तलाकशुदा	3	10
	विधवा / विधुर	15	50
परिवार का प्रकार			
5	परिवार का प्रकार	संख्या	प्रतिशत
	संयुक्त	12	40
	एकांकी	18	60
पिछला निवास स्थान			
6	पिछला निवास स्थान	संख्या	प्रतिशत
	ग्रामीण	6	20
	शहरी	24	80
आय (मासिक रूप में)			
7	आय (मासिक रूप में)	संख्या	प्रतिशत
	1000 – 3000	0	0
	3001 – 6000	3	10
	6001 – 9000	12	40
	9000 से अधिक	15	50

शैक्षिक योग्यता			
8	शैक्षिक योग्यता	संख्या	प्रतिशत
	निरक्षर	0	0
	प्राथमिक	6	20
	माध्यमिक	9	30
	उच्च माध्यमिक	12	40
	महाविद्यालय	3	10
व्यवसाय			
9	व्यवसाय	संख्या	प्रतिशत
	निजी सेवाएँ	9	30
	सरकारी सेवाएँ	12	40
	कृषि सेवाएँ	3	10
	अन्य / ग्रहणी	6	20
जति			
10	जति	संख्या	प्रतिशत
	सामान्य	25	83.3
	अन्य पिछड़ा	5	16.6
	टनुसूचित	0	0

स्रोत :-प्राथमिक डाटा पर आधारित

आयु/उम्र

आयु बढ़ने के साथ-साथ व्यक्ति के व्यवहार व व्यक्तित्व में काफी बदलाव आता है। उसका अनुभव व समझदारी उम्र के साथ बढ़ती है। इसलिए उत्तरदाता की आयु का अध्ययन जरूरी है।

तालिका -1 के अनुसार 620 प्रतिशत उत्तरदाता 60-65 वर्ष, 40 प्रतिशत 65-70 वर्ष तथा 30 प्रतिशत 70-75 वर्ष व 10 प्रतिशत लोग 75 वर्ष से ज्यादा उम्र के थे।

आँकड़ों से स्पष्ट है कि उम्र के साथ-साथ व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक क्षमता कमजोर हो जाती है, वह दूसरों पर निर्भर हो जाता है तथा परिवार उनकी उपेक्षा करता है।

लिंग

लिंग व्यक्ति के सामाजिकरण व व्यक्तित्व को दर्शाता है।

तालिका-1 में बड़ी संख्या में पुरुष 60 प्रतिशत व महिला 40 प्रतिशत हैं। परिणामों से पता चलता है कि महिलाएँ घर के कामों में मदद करती हैं। जिससे परिवार उनको बोझ नहीं समझता पुरुषों की दशा वृद्धावस्था में अच्छी नहीं है।

धर्म

सामाजिक नियंत्रण के महत्वपूर्ण साधनों में से एक है। धर्म आलौकिक शक्तियों के प्रति दृष्टिकोण है। उत्तरदाताओं के

नैतिक मूल्यों, विश्वास व आस्था आदि गुणों का पता लगाने के लिए धर्म का अध्याय महत्वपूर्ण हैं।

आँकड़ों में 80 प्रतिशत लोग हिंदू तथा 12 प्रतिशत जैन धर्म से सम्बन्धित थे। अन्य धर्मों के लोग वहाँ नहीं थे।

जाति

जाति व्यक्ति की जीवन शैली को निर्धारित करने वाली एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है। उत्तरदाताओं में 83.3 प्रतिशत सामान्य जाति से 16.6 प्रतिशत अन्य पिछड़े वर्ग से थे। अनुसूचित जाति का एक भी व्यक्ति आश्रम में नहीं था। नतीजों से पता चलता है कि उच्च जाति के लोग ज्यादा शिक्षित हैं। उनके पास संपत्ति भी है। वही लोग रोजगार की तालाश में पलायन करते हैं और माता-पिता को अकेला छोड़ देते हैं।

विवाह

भारत में विवाह एक महत्वपूर्ण संस्था है। उत्तरदाताओं की सामाजिक स्थिति उनके व्यवहार, सामाजिकरण व सामाजिक समस्याओं को समझने के लिए इसका अध्ययन महत्वपूर्ण है।

तालिका-1 के अनुसार 50 प्रतिशत उत्तरदाता विधवा व विधुर थे। 30 प्रतिशत विवाहित तथा 10 प्रतिशत लोग तलाकशुदा थे केवल 10 प्रतिशत लोग ही अविवाहित थे।

अध्ययन से पता चलता है कि व्यक्ति के जीवन साथी की मृत्यु का उसकी वृद्धावस्था पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अकेला व्यक्ति बिना किसी के सहारे के अनेक समस्याओं का सामना करता है।

परिवार का आकार

परिवार व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करता है, यह व्यक्ति के सामाजिकरण की प्राथमिक संरचना है व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका है, वृद्ध लोग परिवार में मुखिया व निर्णयकर्ता की भूमिका निभाते हैं।

सारणी-1 में 60 प्रतिशत उत्तरदाता एकल परिवार से थे तथा 40 प्रतिशत उत्तरदाता संयुक्त परिवार से थे।

आँकड़े इस बात की पुष्टि करते हैं कि टूटते हुए परिवार वृद्धाश्रमों के उद्भव को बढ़ावा देते हैं।

निवास क्षेत्र

उत्तरदाताओं के निवास स्थान के क्षेत्र का अध्ययन आवश्यक है, क्योंकि यह व्यक्ति के रीति-रिवाजों, जीवन-शैली व जीवन स्तर को दर्शाता है।

तथ्यों से पता चलता है कि 80 प्रतिशत उत्तरदाता शाही क्षेत्र तथा 20 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के रहने वाले थे।

परिणाम इस बात की पुष्टि करते हैं कि ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा शाही क्षेत्र के वृद्ध आश्रमों में जा रहे हैं। वहाँ परिवार का आकार बहुत छोटा है तथा जीवन बहुत व्यस्त है बुजुर्ग लोग समायोजन की समस्या का सामना कर रहे हैं।

आय

आय से अभिप्राय एक मास की अवधि के दौरान सभी श्रम व कमाई के योग से हैं।

तालिका-1 में 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं की मासिक आय 3000-6900 रुपये के बीच की हैं, जबकि 20 प्रतिशत 6000-9000 रुपये के बीच आय वाले हैं, परन्तु आश्चर्य तब हुआ जब पता चला कि 50 प्रतिशत बुजुर्ग 9000 से ज्यादा मासिक आय वाले हैं।

वृद्धावस्था पेंशन व्यक्ति को अच्छा जीवन जीने में काफी सहायक है, बुजुर्गों को अपने दैनिक जीवन की वस्तुओं के लिए किसी पर निर्भर नहीं रहना पड़ता।

शैक्षिक योग्यता

शिक्षा व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का आधार है, यह समाज के सदस्य के रूप में गुणात्मक परिवर्तन लाती है। शिक्षित व्यक्ति आर्थिक व सामाजिक रूप से बेहतर जीवन जी सकता है।

अध्ययन से पता चलता है कि कोई भी उत्तरदाता निरक्षर नहीं था। 40 प्रतिशत उच्च माध्यमिक स्तर तक शिक्षित थे तथा 30 प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक स्तर तक शिक्षित थे। जबकि 20 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक शिक्षा ग्रहण कर चुके थे, व 10 प्रतिशत लोग स्नातक किए हुए थे।

नतीजे यह बताते हैं कि शिक्षित लोग भी समय के साथ परिवार में समायोजन नहीं कर पाते पीढ़ी अंतराल इस अवस्था में एक बड़ी समस्या है।

पेशा

उत्तरदाताओं के व्यवसाय का अर्थ है उनकी आय के स्रोत जो उनके सामाजिक आर्थिक जीवन को निर्धारित करता है। व्यवसाय का अध्ययन महत्वपूर्ण है जिसमें ये लोग वृद्धाश्रम में आने से पहले लगे हुए थे।

तालिका-1 के अनुसार 40 प्रतिशत उत्तरदाता सरकारी सेवाओं में थे जबकि 30 प्रतिशत निजी सेवाओं में कार्यरत थे। 10 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में संलग्न थे तथा 20 प्रतिशत अन्य व ग्रहणी उत्तरदाता थे।

परिणाम बताते हैं कि ज्यादातर उत्तरदाता आर्थिक रूप से स्वतंत्र हैं उनकी पेंशन व जमा पूँजी उनकी वृद्धावस्था में सहायक सिद्ध हुई है।

तालिका – 2 आश्रम में उपलब्ध सेवाओं के प्रति संतुष्टि का स्तर

जिसमें 60 प्रतिशत लोग संतुष्ट व 10 प्रतिशत असंतुष्ट थे तथा 30 प्रतिशत लोगों ने इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा। असंतोष का कारण दवाई उपलब्धता तथा डॉक्टर की कमी

	संतुष्ट	असंतुष्ट	सामान्य
आवास सुविधा	24 (80)	7 (10)	69 (100)
भोजन सुविधा	18 (60)	9 (30)	10 (10)
कपड़े धोने की सुविधा	21 (70)	9 (30)	10 (10)
पूजा व प्रार्थना स्थल	27 (90)	0	10 (10)
मनोरंजन सुविधा	24 (80)	0	6 (20)
बचाव व सुरक्षा	18 (60)	निष्कर्ष	9 (30)

स्रोत:—प्राथमिक डाटा पर आधारित (कोष्ठक में दिया आँकड़ा दर्शाता है।)

अध्ययन में आवास सुविधा में आवास का प्रकार, कमरे का आकार अलमारी, वेंटिलेशन आदि को शामिल किया गया है। यह पाया गया है कि 80 प्रतिशत बुजुर्ग सुविधा से संतुष्ट हैं। 10 प्रतिशत असंतुष्ट व 10 प्रतिशत ऐसे लोग हैं। जिन्होंने कुछ नहीं कहा। अधिकांश लोग संतुष्ट हैं क्योंकि कमरे काफी बड़े और हवादार थे। साफ-सफाई की व्यवस्था भी थी।

भोजन जीवन की मूलभूत आवश्यकता है भोजन के समय के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता भी जरूरी है। बढ़ती उम्र के साथ आहार का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। इसलिए भोजन सुविधा में भोजन की गुणवत्ता, सन्तुलित आहार, भोजन का समय, आदि शामिल है।

यह पाया गया कि 60 प्रतिशत उत्तरदाता भोजन सुविधा से सन्तुष्ट हैं। 30 प्रतिशत असन्तुष्ट हैं जबकि 10 प्रतिशत उत्तरदाता ने इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा।

- कपड़े धोने की सुविधा में धोबी की नियुक्ति, वाशिंग मशीन या स्वयं कपड़े धोना या भुगतान करना शामिल है। यह पाया गया कि 70 प्रतिशत उत्तरदाता संतुष्ट हैं तथा 30 प्रतिशत असंतुष्ट हैं। शोधकर्ता ने पाया कि वहाँ वाशिंग मशीन की सुविधा थी, परन्तु बेड़ शीट आदि के लिए प्रतिदिन के कपड़े उत्तरदाता स्वयं धोते हैं।
- पूजा व प्रार्थना स्थल—वर्तमान अध्ययन में पूजा स्थल, शांति पूर्ण, माहौल सत्संग, भवन आदि को शामिल किया गया है। यह पाया गया कि 90 प्रतिशत बुजुर्ग संतुष्ट थे जबकि 10 प्रतिशत ने इस विषय में कुछ नहीं कहा। शोधकर्ता ने देखा कि वहाँ मंदिर बनाया भी गया था। अधिकांश उत्तरदाता सन्तुष्ट नहीं हैं।
- मनोरंजन सुविधा में टी०वी० अखबार, पिकनिक खेल, संगीत आदि को शामिल किया गया है। मनोरंजन गतिविधियाँ उम्र के साथ बदलती रहती हैं ये व्यक्ति की उम्र, आय, स्वास्थ्य, क्षमता स्तर आदि पर निर्भर करती है। 80 प्रतिशत उत्तरदाता सुविधाओं से संतुष्ट थे। जबकि 20 प्रतिशत तो ऐसे थे। जिनका कोई रुझान नहीं था।
- चिकित्सा सुविधा—इस अध्ययन में उपचार विधि, डॉक्टर व नर्सों की संख्या व उनकी उपस्थिति को जाँचा गया है।

बदलते आर्थिक व सामाजिक परिवेश में युवा पीढ़ी अपनी नई पहचान बनाने की तालाश में माता-पिता को अकेले छोड़कर पलायन कर रही है। वृद्धों का जीवन परिवार में हो रहे संरचनात्मक व कार्यात्मक परिवर्तनों से बहुत प्रभावित हुआ है। बुजुर्ग लोग अकेले व असुरक्षित जीवन जी रहे हैं। वर्तमान अध्ययन में बहुसंख्यक उत्तरदाता 65-70 वर्ष के थे, महिलाओं की संख्या पुरुषों की अपेक्षा कम थी। अधिकांश लोग विधवा व विधुर थे तथा हिन्दू धर्म के लोग ज्यादा थे। उत्तरदाताओं में एक बड़ी संख्या उच्च जाति से सम्बन्ध रखती थी। उनमें से ज्यादातर लोग सरकारी सेवानिवृत्त थे। जो अपनी पेंशन पर निर्भर थे आधे से ज्यादा लोग उच्च माध्यमिक तक शिक्षित थे। जो शहरी क्षेत्र में एकांकी परिवार से सम्बन्ध रखते थे। यह देखा गया कि वृद्धाश्रम की सुविधाओं से अधिकांश लोग सन्तुष्ट थे। कुछ ही उत्तरदाता असंतुष्ट थे। जबकि कुछ बुजुर्ग किसी विषय पर ज्यादा बात नहीं कर रहे थे।

इसके बावजूद आश्रम का निर्माण बहुत ही अच्छे तरीके से व अच्छे पर्यावरण में किया गया था। वहाँ इमारत के अन्दर व बाहर सामने एक अच्छा बगीचा व एक मंदिर भी था और आश्रम के अन्दर ही एम्बुलेंस खड़ी थी और बड़ी संख्या में स्टॉफ वहाँ मौजूद था और सबका व्यवहार सकारात्मक था।

सुझाव

उपरोक्त निष्कर्षों के आधार पर अनुशांसा की जाती हैं कि –

- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है बुजुर्ग लोगों की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक समर्थन की आवश्यकता है।
- सामाजिक कार्यकर्ताओं को वृद्ध लोगों से सम्बन्धित जागरूकता पैदा करने वाली गतिविधियों में शामिल होना चाहिए।
- सरकार द्वारा वरिष्ठ नागरिकों के लिए ज्यादा नीतियाँ व फंडों की योजना बनाई जानी चाहिए।
- सरकारी व गैर सरकारी संगठनों को “वरिष्ठ नागरिक कल्याण व भरण पोषण अधिनियम 2007” के कार्यान्वयन पर ध्यान देना चाहिए।
- परिवार व सामुदायिक कार्यक्रमों में बुजुर्ग लोगों की भागीदारी को बढ़ावा दिया जाए। उनके विचारों व

भावनाओं का सम्मान किया जाये जिससे वो समाज में अपने आप को अकेला न महसूस करें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- अली, एम०, जेड० (2015) वृद्ध व्यक्तियों की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं पर एक अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एकेडमिक रिसर्च 1(2), 31-35।
- बीवी, जे०एस०, (2010), वृद्धाश्रमों में रहने वाली बुजुर्ग महिलाओं का प्रोफाइल केरल में एक अध्ययन। इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंस, 3(2), 13-32।
- भूषणम, जी०बी०, श्रीदेवी, के०, और कामेश्वरन, जे० (2013), रहने की स्थिति और पोषण पर एक तुलनात्मक अध्ययन चेन्नई, भारत के पेड और अनपेड होम्स में बुजुर्गों की स्थिति इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक एंड रिसर्च पब्लिकेशन्स, 3(9), 1-4।
- चक्रवर्ती, एस०, और सरकार, ए० (2011), भारत में जनसंख्या की उम्र बढ़ने का पैटर्न और रुझान। इंडियन जर्नल ऑफ स्पेटियल साइंस, 2(4), 1-11।
- चंद्रिका, एस०, राधाकुमारी, पी० और देवी माधवी, बी० (2015), विशाखापत्तनम शहर में वृद्धाश्रम और समुदाय में रहने वाले बुजुर्गों के जीवन की गुणवत्ता, जर्नल ऑफ डेंटल एंड मेडिकल साइंसेज, 14(10), 27-31।
- डी०बी० (2014), बुजुर्गों की संस्थागत देखभाल हसन शहर, कर्नाटक, भारत में वृद्धाश्रमों का एक अध्ययन। अंतर्राष्ट्रीय जर्नल ऑफ इंटरडिसिप्लिनरी एंड मल्टीडिसिप्लिनरी स्टडीज, 1(5), 100-107।
- दीक्षित, एस०, बंसल, एस०, राजा, आर०, दुआ, एस०, और अग्रवाल, आर० (2015), वृद्धाश्रम प्रवेश के कारण और मूल्यांकन स्वास्थ्य सम्बन्धी जीवन की गुणवत्ता। नेशनल जर्नल ऑफ कम्युनिटी मेडिसिन, 6(1) 73-77।
- दूबे, ए०, (2011), जम्मू में वृद्धाश्रम और पारिवारिक व्यवस्था में बुजुर्गों के रहन-सहन का एक अध्ययन। कमला राज जर्नल ऑफ स्टडी गृह विज्ञान, 5(2), 93-98।
- जॉर्ज, एस०, फ्रांसिस, पी०टी० पॉल, एन०, और लीलामोनी, के० (2015), बुजुर्गों में अवसाद : भारत के केरल राज्य के इमाकुलम में वृद्धावस्था और खुद के घरों में रहने वाले बुजुर्गों के बीच एक तुलनात्मक अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इमेंजिंग टैक्नोलॉजी एंड रिसर्च 2(4), 62-66।
- घोष, ए०, और सिंह ए०, (2014), भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र के ग्रामीण इलाकों में बुजुर्गों की स्वास्थ्य स्थिति नेशनल जर्नल ऑफ सामुदायिक चिकित्सा 5(2), 236-239।
- गौड़, ए०ए०, और निखाड़े, एन०एस० (2015), वृद्धाश्रम में रहने वाले वृद्धों में अवसाद की व्यापकता, अंतर्राष्ट्रीय अभिलेखागार इंटीग्रेटेड मेडिसिन, 2(11), 1-5।
- हेमावती, यू०, और रानी, बी०एस०, (2012), बुजुर्गों द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन (संस्थागत और गैर-संस्थागत) इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड रिसर्च 3(12), 1676-1677।



अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के प्रतिमानों में नेताजी सुभाष चंद्र बोस और नरेंद्र मोदी का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. निकिता राज, अतिथि शिक्षिका
राज नारायण महाविद्यालय, हाजीपुर

शोध-सार

यह लेख नेताजी सुभाष चंद्र बोस और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विदेश नीतियों के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है। इसमें सुभाष चंद्र बोस के अंतरराष्ट्रीय संबंधों और नरेंद्र मोदी की मौजूदा विदेश नीति में समानताएं खोजी गई हैं। शोध-पत्र में दोनों नेताओं की नीतियों और विचारधाराओं की तुलनात्मक समीक्षा करते हुए इस बात पर ध्यान दिया गया है कि दोनों ने किस प्रकार अपने देश की अखंडता और संप्रभुता को बनाए रखा। इसके अलावा, साहित्य समीक्षा और तुलनात्मक दृष्टिकोण द्वारा उनके अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

शब्द-कुंजी- सुभाष चंद्र बोस, नरेंद्र मोदी, विदेश नीति, अंतरराष्ट्रीय संबंध, तुलनात्मक अध्ययन, अखंडता, संप्रभुता।

परिचय

इतिहास के वे शख्सियत जिनके बारे में अक्सर अधूरी बात ही की जाती है। जिनके “जय हिंद” के नारे आज भी हर किसी की जुबां पर हैं और जिन्होंने देश की आजादी के लिए अंग्रेजों से लोहा लेने वाली आजाद हिंद फौज की कमान संभाली। ऐसे महान नायक है हमारे देश के महान क्रांतिकारियों में सबसे अग्रणी सुभाष चंद्र बोस। वे गुलाम भारत के एक ऐसे शख्सियत थे जिन्होंने ना केवल देश के अंदर बल्कि देश के बाहर भी आजादी की लड़ाई लड़ी। राष्ट्रीय आंदोलन में नेताजी का योगदान कलम चलाने से लेकर आजाद हिंद फौज का नेतृत्व कर अंग्रेजों से लोहा लेने तक का रहा है। अंतरराष्ट्रीय संबंधों के परिपेक्ष्य में देखा जाए तो नेता जी ने ब्रिटिश हुकूमत का सफाया करने के लिए जर्मनी, इटली, जापान, सिंगापुर आदि देशों से भारत की स्वतंत्रता के लिए हर संभव सहायता प्राप्त करने की कोशिश की जिसमें वो काफी हद तक सफल भी हुए। इस शोध पत्र को लेकर मेरे जो उद्देश्य प्रश्न रहे हैं वे हैं-

वर्तमान शोध-पत्र अध्ययन, तुलनात्मक विश्लेषण पर विशेष रूप से केंद्रित है एवं इन उद्देश्यों के साथ आगे बढ़ने की कोशिश करता है कि किस प्रकार नेताजी सुभाष चंद्र बोस के अंतरराष्ट्रीय संबंधों की नीति तथा वर्तमान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विदेश नीति में समरसता देखी जा सकती है। साथ ही, किस प्रकार दोनों ने ही अंतरराष्ट्रीय संबंधों पर विशेष बल देते हुए अपने देश की अखंडता एवं संप्रभुता को कायम रखने की कोशिश की है। इसके अलावा, वैदेशिक संबंधों पर दोनों की विचारधाराओं का अध्ययन किया जाता है कि किन विचारधाराओं से प्रेरित होकर सुभाष चंद्र बोस ने अपने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को स्थापित किया है एवं वर्तमान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी किस प्रकार की विचारधारा को अपनाए हुए है तथा क्या इनकी विचारधाराएँ नेताजी की विचारधाराओं से मेल खाती है। इस शोधपत्र में इन सभी परिपेक्ष्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है।

साहित्य समीक्षा और कार्यप्रणाली

यह शोध पत्र वर्तमान संदर्भ में सुभाष चंद्र बोस और नरेंद्र मोदी के बीच विभिन्न पहलुओं का तुलनात्मक तरीकों से समीक्षा करता है एवं इस तरह से आगे बढ़ता है कि शोध-पत्र विश्लेषण के व्यापक तरीकों के संदर्भ में होगा जो पिछले शोध को संश्लेषित करता है। इसमें मेरे अपने शोध अनुभव के आधार पर इस पद्धति द्वारा और अधिक विस्तृत रूप से अध्ययन किया जाता है तथा उपर्युक्त प्रश्नों की प्रासंगिकता के लिए निष्कर्ष निकाला जाता है। इसमें शोध प्रश्नों की पुष्टि के लिए विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए वर्णनात्मक और तुलनात्मक दृष्टिकोणों द्वारा निष्कर्ष निकाला जाता है। इसके लिए शोध पत्र की संरचना इस प्रकार की जाती है कि इसमें सबसे पहले सुभाष चंद्र बोस तथा

नरेंद्र मोदी का एक संक्षिप्त विवरण देते हुए अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर दोनों के विचार एवं नीतियों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाएगा तथा शोध के मूल प्रश्नों पर विस्तार से व्याख्या किया जाएगा। इसका भी विवरण शोध पत्र में किया जाएगा कि भविष्य में इसकी क्या संभावनाएँ होंगी तथा किस प्रकार यह आगे किए जाने वाले शोध के लिए प्रासंगिक होगा। इन सभी प्रश्नों के उत्तर की जांच करने के लिए विभिन्न स्रोतों द्वारा साहित्य समीक्षा की गई है। जैसे तो सुभाष चंद्र बोस और नरेंद्र मोदी के अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण की चर्चाएँ कई अध्ययनों में व्यक्तिगत रूप से की गई हैं, जिनमें इनकी नीतियों और विचारधाराओं का उल्लेख किया गया है। परंतु अभी तक ऐसा कोई भी अध्ययन नहीं किया गया है, जिसमें दोनों के अंतरराष्ट्रीय संबंधों का तुलनात्मक विश्लेषण हो। उपर्युक्त सभी प्रश्नों की जांच के लिए दोनों का व्यक्तिगत रूप से संक्षिप्त विवरण देने के बाद इनका तुलनात्मक विश्लेषण आवश्यक है।

सुभाष चंद्र बोस का जीवन परिचय एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों में उनकी भूमिका

भारत की आजादी के 75 साल आज हम उत्सव के रूप में मना रहे हैं। इस बेशकीमती आजादी को पाने में लाखों सेनानियों को प्रेरित किया, नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने। हर भारतीय के दिल में नेताजी ने ऐसी आवाज प्रज्वलित की, जिसने न केवल भारत को स्वतंत्र किया बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य की नींव को ध्वस्त कर दिया। साथ ही आजाद हिंद फौज को दुनिया के सबसे शक्तिशाली फौज से लड़ने का साहस दिया। उन्होंने भारत की पहली अंतरिम सरकार की स्थापना की एवं 21 अक्टूबर 1943 को पहली बार भारत की धरती पर राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया। ऐसे महान शख्सियत का जन्म 23 जनवरी 1897 को कटक के प्रसिद्ध वकील जानकीनाथ बोस तथा प्रभावती देवी के यहां हुआ। देश को “जय हिंद”, “स्वतंत्रता दी नहीं जाती, ली जाती है” और “तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा” का नारा देने वाले सुभाष चंद्र बोस के पिता जानकीनाथ बोस कटक शहर के मशहूर वकील थे। चौदह भाई-बहनों में सुभाष अपने माता-पिता की नौवीं संतान और पांचवें बेटे थे। अपने सभी भाइयों में सुभाष को सबसे ज्यादा लगाव शरतचंद्र से था। संपन्न बंगाली परिवार में जन्मे नेता जी की प्रारंभिक पढ़ाई कटक की रेवेनशा कॉलेजियेट स्कूल में हुई। तत्पश्चात, उनकी शिक्षा कोलकाता के प्रेसिडेंसी कॉलेज और स्कॉटिस चर्च कॉलेज में हुई।

देशभक्ति की भावना का उदाहरण तो उनके शुरुआती जीवन में ही देखने को मिलता है, जब उन्होंने अपने शिक्षक के भारतीय विरोधी बयान पर घोर आपत्ति जताई थी। तभी सब को अंदाजा लग गया था कि वे गुलामी के आगे

सिर झुकाने वालों में से नहीं है। नेताजी कॉलेज के शुरुआती दिनों में ही बंगाल में क्रांति की वह आवाज थी जिसने राष्ट्रीय आंदोलन को एक नई दिशा दी। वे शुरु से ही स्वामी विवेकानंद के आदर्शों से प्रेरित रहे, इस कारण समाज के प्रति उनकी सोच मानवतावादी और सुधारवादी बनती गई। 1919 में स्नातक के बाद भारतीय प्रशासनिक सेवा की तैयारी के लिए उनके माता-पिता ने उन्हें इंग्लैंड के केंब्रिज विश्वविद्यालय भेज दिया। चूक अंग्रेजी शासन के जमाने में भारतीयों के लिए सिविल सर्विस में जाना बहुत कठिन था, फिर भी उन्होंने न केवल सिविल सर्विसेज की परीक्षा पास की बल्कि चौथे स्थान प्राप्त किए। लेकिन उन्मुक्त विचारों के सुभाष और भारत मां के इस लाल का मन अंग्रेजों की नौकरी में कहां लगने वाला था। उन्हें जलियांवाला बाग कांड ने इस कदर विचलित कर दिया कि वे नौकरी से इस्तीफा देकर आजादी की लड़ाई में कूद पड़े। लंदन से भारत लौटने के बाद नेताजी की मुलाकात देशबंधु चितरंजन दास से हुई जिन्होंने उन दिनों फॉरवर्ड नाम से एक अंग्रेजी अखबार शुरू कर अंग्रेजों के जुल्मों सितम के खिलाफ मुहिम छेड़ रखी थी। बोस से मिलने के बाद चितरंजन दास ने उन्हें फॉरवर्ड अखबार का संपादक बना दिया। नेताजी उस अखबार में ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ जोर-शोर से लिखकर अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ माहौल तैयार कर रहे थे। कलम से शुरु की गई इस मुहिम की वजह से उन्हें साल 1921 में छह महीने की जेल भी हुई। उन्होंने हमेशा यही कहा कि “दुनिया में सबसे बड़ा अपराध अन्याय सहना और गलत के साथ समझौता करना है।” नेताजी ने राष्ट्रवाद को मानव जाति के उच्चतम आदर्शों ‘सत्यम शिवम सुंदरम’ से प्रेरित बताया। उनके मन में पहले से ही एक मजबूत और निडर व्यक्तित्व था। वे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और अत्यधिक दासता से भारत का उद्धार चाहते थे।

अपने राजनीतिक सफर में कांग्रेस के राष्ट्रीय महासचिव रहने के बाद 1938 के हरिपुरा अधिवेशन में नेताजी को कांग्रेस का राष्ट्रीय अध्यक्ष चुना गया। उन्होंने कहा कि “मेरी यह कामना है कि महात्मा गांधी के नेतृत्व में ही हमें स्वाधीनता की लड़ाई लड़नी है क्योंकि हमारी लड़ाई केवल ब्रिटिश साम्राज्यवाद से नहीं, विश्व साम्राज्यवाद से है।”¹ उनके नेतृत्व में एक जादुई प्रभाव था, जिस कारण उनकी एक आवाज पर पूरा देश जान न्योछावर करने को तैयार हो जाता था। लेकिन नेताजी के क्रांतिकारी विचारों और आकर्षक व्यक्तित्व से अपने ही वरिष्ठ नेता बोस की निंदा करने लगे। विचारों में मतभेद और बोस की लोकप्रियता पार्टी के कई नेताओं को नही भा रही थी, इसे भापते हुए नेताजी ने “फॉरवर्ड ब्लॉक” नाम से अपनी अलग पार्टी बनाई। इसके साथ ही कांग्रेस से उनका मोह भंग होने लगा। वर्ष 1939 को त्रिपुरी अधिवेशन में उन्होंने गांधी जी के उम्मीदवार पट्टाभि सीतारमैया के खिलाफ फिर से अध्यक्ष पद का चुनाव जीता, परंतु गांधी जी के साथ वैचारिक मतभेद के कारण नेताजी ने कांग्रेस के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे दिया। इसी बीच द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया। बोस को लगा कि अगर ब्रिटेन के दुश्मनों से मिला जाए तो उनके साथ मिलकर अंग्रेजी हुकूमत से आजादी हासिल की जा सकती है। हालांकि उनके विचारों पर अंग्रेजी हुकूमत को शक था क्योंकि नेता जी ना सिर्फ एक क्रांतिकारी थे, बल्कि वे अंग्रेजों को उन्हीं के खेल में मात देना भी जानते थे। इसी से डरकर जुलाई 1940 में नेताजी को कलकत्ता की जेल में बंद कर दिया गया। तत्पश्चात उनकी बिगड़ती सेहत को देखते हुए ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हें उनके आवास पर ही नजरबंद कर दिया गया। कुछ दिन बाद बोस वहां से भागने में कामयाब हुए, वे भेष बदलकर कलकत्ता से काबुल गए और फिर वहां से सोवियत संघ के रास्ते

जर्मनी पहुंचे एवं आजादी की लड़ाई को एक नई दिशा और ऊर्जा दी। यहीं से अंतरराष्ट्रीय संबंधों में उनकी भूमिका एवं योगदान की शुरुआत होती है। जिस वक्त नेताजी यूरोप यात्रा पर निकले, उस वक्त यूरोप में हिटलर के नाजीवाद और मुसोलिनी के फासीवाद का दौर था एवं दोनों का निशाना इंग्लैंड था। इसलिए बोस को दुश्मन का दुश्मन भविष्य का दोस्त नजर आ रहा था। हालांकि 1933 में जब सुभाष चंद्र बोस जर्मनी में थे तब हिटलर ने उनसे मिलने से भी इनकार कर दिया था, परंतु 1940 की शुरुआत में स्थिति बदल चुकी थी। जर्मनी विश्वयुद्ध जीतने की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए अंग्रेजों को हराना चाहता था। हिटलर जानता था कि यदि युद्ध के दौरान भारतीय अंग्रेजों का समर्थन करते हैं, तो ब्रिटिश सेना को मजबूती मिल जाएगी एवं इससे जर्मनी के जीतने की संभावना कम हो जाएगी, इसलिए उसने 1940 की शुरुआत में बोस से मिलने की इच्छा जताई। हिटलर से मिलने के बाद बोस ने उनसे अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने के लिए भारतीयों के साथ गठबंधन बनाने पर चर्चा की, परंतु हिटलर ने इसमें कोई खास दिलचस्पी नहीं ली। बोस यह जानते थे कि हिटलर भारत को आजाद करने के लिए कोई सैन्य सहायता नहीं देगा, इसलिए उन्होंने नॉर्थ अफ्रीका में गिरफ्तार किए गए भारतीय कैदियों की रिहाई की मांग की। पहले तो हिटलर इस बात से सहमत नहीं था, लेकिन बोस के बहुत प्रयासों के बाद वह कैदियों को रिहा करने के लिए तैयार हो गया। तत्पश्चात उन्होंने ब्रिटिश शासन से लड़ने और भारत को आजाद कराने के लिए जर्मनी में 1000 से अधिक लोगों की एक सेना तैयार की। किन्तु जब जर्मनी ने उन्हें रूस के विरुद्ध प्रयुक्त करने का प्रयास किया, तब उनके सामने कठिनाई उत्पन्न हो गई। उन्हें पता लग गया था कि हिटलर और जर्मनी से उन्हें कुछ और नहीं मिलने वाला है, इसलिये मार्च 1943 को वे जर्मनी से पूर्वी एशिया की ओर निकल गये। नेताजी जर्मनी से जापानी नियंत्रण वाले सिंगापुर पहुंचे एवं यहाँ से आजाद हिंद फौज का दूसरा चरण प्रारंभ हुआ एवं यहीं विदेश की धरती से सुभाष चंद्र बोस ने भारत की स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण मोड़ उपस्थित किया। सिंगापुर पहुँचकर वे सर्वप्रथम वयोवृद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस से मिले, जिनके द्वारा ‘आजाद हिन्द फौज’ का गठन पहली बार हुआ था। मूल रूप से उस वक्त यह आजाद हिन्द सरकार की सेना थी, जिसका लक्ष्य अंग्रेजों से लड़कर भारत को स्वतंत्रता दिलाना था। नेताजी ने जून 1943 में टोकियो रेडियो से घोषणा की कि “अंग्रेजों से यह आशा करना बिल्कुल व्यर्थ है कि वे स्वयं अपना साम्राज्य छोड़ देंगे, हमें भारत के भीतर व बाहर से स्वतंत्रता के लिये स्वयं संघर्ष करना होगा।”² इससे प्रफुल्लित होकर रासबिहारी बोस ने स्वेच्छा से 4 जुलाई 1943 को सिंगापुर के एडवर्ड पार्क में आजाद हिन्द फौज का नेतृत्व नेताजी को सौंप दिया। 5 जुलाई 1943 को सिंगापुर के टाउन हॉल के सामने नेताजी ने सुप्रीम कमांडर के रूप में सेना को संबोधित करते हुए “जय हिन्द” का अमर नारा दिया और 21 अक्टूबर 1943 को आजाद हिन्द फौज के सर्वोच्च सेनापति की हैसियत से सिंगापुर में स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार ‘आजाद हिन्द सरकार’ की स्थापना की। अपने इस सरकार के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा सेनाध्यक्ष तीनों का पद नेताजी ने अकेले संभाला। साथ ही अन्य जिम्मेदारियां जैसे वित्त विभाग एस.सी चटर्जी, प्रचार विभाग एस.ए. अय्यर एवं महिला संगठन लक्ष्मी स्वामीनाथन को सौंपा गया। नेताजी ने आजाद हिंद फौज में महिला संगठन की स्थापना की, इस कारण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए वे अग्रणी माने जाते हैं। उनके द्वारा आजाद हिंद फौज के लिए जो महिला संगठन बनाया गया, उसका नाम “रानी झांसी रेजिमेंट” था। यह 1943 में दक्षिण पूर्व एशिया में जापानी सहायता से कैप्टन

लक्ष्मी स्वामीनाथन के नेतृत्व में बनाई गई सशस्त्र बल थी एवं भारतीय राष्ट्रीय सेना की एकमात्र महिला रेजिमेंट थी। नेताजी के इस सरकार को जर्मनी, जापान, फिलीपीन्स, कोरिया, चीन, इटली, मन्चुको और आयरलैंड सहित 11 देशों ने मान्यता दे दी थी। इतना ही नहीं नेताजी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर जापान ने अंडमान व निकोबार द्वीप इस अस्थायी सरकार को दे दिये। तत्पश्चात उन्होंने उन द्वीपों का नया नामकरण किया, अंडमान का नया नाम 'शहीद द्वीप' तथा निकोबार का 'स्वराज्य द्वीप' रखा एवं 30 दिसम्बर 1943 को इन द्वीपों पर स्वतन्त्र भारत का ध्वज भी फहरा दिया गया। मार्च 1944 को "दिल्ली चलो" के नारे के साथ आजाद हिंद फौज का हिन्दुस्तान की धरती पर आगमन हुआ। आगे चलकर आजाद हिन्द फौज ने अंग्रेजों पर आक्रमण कर कुछ भारतीय प्रदेशों को अंग्रेजों से मुक्त करा लिया। जापानी सेना के साथ मिलकर आजाद हिन्द फौज बर्मा सहित रंगून से होती हुई 18 मार्च 1944 को कोहिमा और इम्फाल के भारतीय मैदानी क्षेत्रों में पहुँच गई और ब्रिटिश सेना से जमकर मोर्चा लिया और यही एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुआ। एक तरफ समुद्री क्षेत्र में अंडमान-निकोबार द्वीप आजाद हिंद फौज को मिल जाना वहीं दूसरी तरफ भारत के कुछ पूर्वोत्तर हिस्से जैसे मणिपुर एवं अन्य कुछ हिस्से कब्जे में ले लेना आजाद हिंद फौज की सफलता थी।

6 जुलाई 1944 को नेताजी ने रंगून रेडियो स्टेशन से महात्मा गांधी के नाम जारी एक प्रसारण में अपनी स्थिति स्पष्ट की और आजाद हिन्द फौज द्वारा लड़ी जा रही इस निर्णायक लड़ाई की जीत के लिये उनकी शुभकामनाएँ माँगीं जिसमें उन्होंने कहा कि- "मैं जानता हूँ कि ब्रिटिश सरकार भारत की स्वाधीनता की माँग कभी स्वीकार नहीं करेगी। मैं इस बात का कायल हो चुका हूँ कि यदि हमें आजादी चाहिये तो हमें खून के दरिया से गुजरने को तैयार रहना चाहिये। अगर मुझे उम्मीद होती कि आजादी पाने का एक और सुनहरा मौका अपनी जिन्दगी में हमें मिलेगा तो मैं शायद घर छोड़ता ही नहीं, मैंने जो कुछ किया है अपने देश के लिये किया है। विश्व में भारत की प्रतिष्ठा बढ़ाने और भारत की स्वाधीनता के लक्ष्य के निकट पहुँचने के लिये किया है। भारत की स्वाधीनता की आखिरी लड़ाई शुरू हो चुकी है, आजाद हिन्द फौज के सैनिक भारत की भूमि पर सफलतापूर्वक लड़ रहे हैं। हे राष्ट्रपिता! भारत की स्वाधीनता के इस पावन युद्ध में हम आपका आशीर्वाद और शुभकामनायें चाहते हैं।"³ इसी दौरान बोस द्वारा ही सबसे पहले गांधी जी के लिए 'राष्ट्रपिता' शब्द का प्रयोग किया गया था। 22 सितम्बर 1944 को 'शहीदी दिवस' मनाते हुये सुभाषचन्द्र बोस ने अपने सैनिकों से मार्मिक शब्दों में कहा- "हमारी मातृभूमि स्वतन्त्रता की खोज में है। तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा। यह स्वतन्त्रता की देवी की माँग है।"⁴ आजाद हिन्द फौज के सभी ब्रिगेडों ने जापानियों के साथ मिलकर भारत की पूर्वी सीमा एवं बर्मा से युद्ध लड़ा किन्तु दुर्भाग्यवश द्वितीय विश्व युद्ध का पासा पलट गया। जर्मनी ने हार मान ली और जापान को भी घुटने टेकने पड़े। जापान की हार के बाद, नेताजी को नया रास्ता ढूँढना जरूरी था, इसलिए उन्होने रूस से सहायता माँगने का निश्चय किया, परंतु वक्त को कुछ और ही मंजूर था। कहा जाता है कि 18 अगस्त 1945 को रूस जाते समय फोर्मासा (वर्तमान ताइवान) में उनका विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। स्वतंत्र भारत की अमरता का जयघोष करने वाले सुभाषचंद्र बोस राष्ट्रप्रेम के दिव्य-ज्योति जलाकर अमर हो गये, लेकिन उनकी राजनीतिक विरासत पर मौत के रहस्य का पर्दा आज भी बना हुआ है।

भले ही ना आज नेताजी है ना उनकी आजाद हिंद सेना। परंतु आजादी की लड़ाई में नेताजी न होते तो आज यह आजाद हिंदुस्तान नहीं होता। निस्सन्देह

सुभाष उग्र राष्ट्रवादी थे, उनके मन में फासीवाद के अधिनायकों के सबल तरीकों के प्रति भावनात्मक झुकाव था और वे भारत को शीघ्रतिशीघ्र स्वतन्त्रता दिलाने हेतु हिंसात्मक उपायों में आस्था भी रखते थे, इसलिए उन्होंने भारत माँ को जंजीर की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए विदेशी सहायता द्वारा आजाद हिंद फौज का गठन किया था। अंतरराष्ट्रीय संबंधों पर उनके अलावा किसी और ने न तो इससे पहले इस तरह की नीतियाँ बनाई एवं न ही इन नीतियों का अनुसरण किया। अपने राष्ट्रहित में उन्होंने जिन नीतियों का अनुसरण कर विभिन्न देशों से सहायता प्राप्त की एवं आजाद हिंद सरकार का गठन किया वह काफी प्रशंसनीय हैं, उनके इस योगदान को देश कभी नहीं भूल पाएगा। नेताजी की उग्र राष्ट्रवादी राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीतियों को जानने के बाद वर्तमान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की नीतियों का भी अध्ययन आवश्यक हो जाता है जिससे दोनों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जा सके।

नरेंद्र मोदी का जीवन परिचय एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों में उनकी भूमिका

भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी का जन्म तत्कालीन गुजरात राज्य के महसाणा जिला स्थित वड़नगर ग्राम में हीराबेन मोदी और दामोदरदास मूलचन्द मोदी के एक मध्यम-वर्गीय परिवार में 17 सितंबर 1950 को हुआ। वे स्वतंत्र भारत के 14वें प्रधानमंत्री एवं इस पद पर आसीन होने वाले स्वतंत्र भारत में जन्मे प्रथम व्यक्ति हैं। अपने माता-पिता की कुल छः संतानों में तीसरे पुत्र नरेन्द्र ने बचपन में रेलवे स्टेशन पर चाय बेचने में अपने पिता का हाथ बटाय़ा एवं किशोरावस्था में भारत-पाकिस्तान के बीच द्वितीय युद्ध के दौरान स्वेच्छा से रेलवे स्टेशनों पर सफ़र कर रहे सैनिकों की सेवा की। मोदी की प्रारंभिक शिक्षा वड़नगर में हुई। उन्होंने आरएसएस के प्रचारक रहते हुए 1980 में गुजरात विश्वविद्यालय से राजनीति विज्ञान में स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। इस प्रकार उनका जीवन संघ के एक निष्ठावान प्रचारक के रूप में प्रारम्भ हुआ। उन्होंने शुरुआती जीवन से ही राजनीतिक सक्रियता दिखलाई और भारतीय जनता पार्टी का जनाधार मजबूत करने में प्रमुख भूमिका निभाई। उनके नेतृत्व में भारत की प्रमुख विपक्षी पार्टी भारतीय जनता पार्टी ने 2014 का लोकसभा चुनाव जीतकर अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की एवं भारत के 14वें प्रधानमंत्री के रूप में अपना पद ग्रहण किया। 2014 की लोकसभा चुनाव के लिए न्यूज एजेंसीज व पत्रिकाओं द्वारा किए गए तीन प्रमुख सर्वेक्षणों ने नरेन्द्र मोदी को प्रधानमंत्री पद के लिए जनता की पहली पसंद बताया था।

प्रधानमंत्री पद ग्रहण के बाद से ही इनके द्वारा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की छवि को शीर्ष पर ले जाने का भरसक प्रयास किया जाता रहा है। इनकी विदेश नीति को इस रूप में समझा जा सकता है कि 2014 के प्रधानमंत्री शपथ ग्रहण समारोह में सार्क देशों के राष्ट्राध्यक्षों को आमन्त्रित कर उन्होंने अपने पहले कदम से ही आलोचकों को चौंका दिया और इनके इस कदम ने इनकी रणनीति को भी सीमांकित कर दिया। तत्पश्चात अन्य देशों के उच्चाधिकारियों के आने का सिलसिला शुरू हुआ जिनमें अमरीका, चीन, न्यूजीलैण्ड, सिंगापुर आदि के शीर्ष अधिकारी भारत की धरती पर आये। अक्सर अन्य प्रधानमंत्री पद सम्भालते ही ताकतवर देशों का दौरा करते हैं लेकिन मोदी ने इसके उलट छोटे देशों का दौरा किया। पहले भूटान फिर नेपाल तथा इसके बाद 'लुक ईस्ट पॉलिसी' पर जोर देते हुए वे जापान गए। भू-राजनीतिक सम्बन्धों के लिए उन्होंने संस्कृति और सभ्यताओं के जुड़ाव को नया आधार बनाया। यह उनकी कुशल विदेश नीति का ही परिचायक है कि आज चीन भी भारत के साथ अपने संबंधों के सुधार की कोशिश में लगा है। भले ही चीन के साथ हमारे

सीमा विवाद हैं, परंतु वह प्रत्यक्ष रूप से कभी भी भारत को नुकसान नहीं पहुंचाता और ना ही ऐसा करने की कोशिश करता है, क्योंकि उसे पता है कि अब सत्ता की शीर्ष पर ऐसा व्यक्ति बैठा है जो ईट का जबाब पत्थर से देगा। इसके अलावा, अमेरिका जैसे शक्तिशाली देश भारत से अपने संबंधों को अधिक प्रगाढ़ करने की कोशिश कर रहा है। इसका एक उदाहरण प्रधानमंत्री मोदी के अमरीकी दौर पर उनका रेड कारपेट पर जोरदार स्वागत से समझा जा सकता है। वहां स्क्वेयर गार्डन में लगभग 20 हजार लोगों को उन्होंने सम्बोधित किया जो कि अमरीकी धरती पर किसी विदेशी नेता को सुनने आए लोगों की सबसे बड़ी तादाद थी। भारतीय मूल के लोगों में मोदी के प्रति जबरदस्त उत्साह देखने को मिला। इनके इस ऐतिहासिक दौर का अमरीका समेत विश्वभर में सीधा प्रसारण किया गया, इसे भी इनकी सफल विदेश नीति ही कहा जा सकता है।

प्रधानमंत्री मोदी ने दुनिया में भारत का दबदबा कायम करने के लिए आक्रामक विदेश नीति के सहारे अपनी सारी ताकत झोंक दी है। उन्होंने भारत के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय आख्यान ही बदल डाले। जो कभी एक लड़खड़ाता हुआ देश था, आज वह उभरती हुई वैश्विक ताकत में तब्दील हो चुका है। मोदी दरअसल एक सन्तुलनकारी ताकत के रूप में भारत की भूमिका को 'नेतृत्वकारी ताकत' में तब्दील कर देना चाहते हैं। वे मानते हैं कि ऐसा देश जहां मानवता का छठा हिस्सा निवास करता है और जो जल्द ही विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने जा रहा है उसे उसका सही मुकाम हासिल हो। इसी दर्जे की तलाश का एक हिस्सा है संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता, जिसके लिए मोदी लगातार प्रयासरत है। अपनी विदेश नीति की आधार-स्तंभ को मजबूत करने के लिए उन्होंने 'पंचमढ़ी' या 'विदेश नीति के पांच नए स्तम्भों' की रूपरेखा तैयार की, जिसमें युगों-युगों से पाले-पोसे गए भारत की संस्कृति और सभ्यता के मूल्यों की पहले से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण और गहरी झलक है। ये पांच स्तम्भ हैं- सम्मान, संवाद, समृद्धि, सुरक्षा एवं संस्कृति तथा सभ्यता।

वैदेशिक संबंधों के साथ-साथ नरेंद्र मोदी ने महिला सशक्तिकरण एवं उन महापुरुषों के योगदान को पुनः देश के सामने रखने का प्रयास किया है जिनका योगदान भारत की स्वतंत्रता में सबसे अहम है और जिनके बलिदानों पर उतनी चर्चाएँ नहीं की गई। राष्ट्र के विकास के लिए महिला सशक्तिकरण को आधार स्तंभ मानकर उन्होंने अनेक कार्य किए। जिसका उदाहरण है, वर्ष 2019 में पहली बार नेशनल डिफेंस अकैडमी में महिलाओं का प्रवेश एवं सेना में परमानेंट कमिशन की स्थापना किया जाना। वहीं दूसरी ओर महापुरुषों के बलिदानों को पुनः उजागर करने की बात की जाए तो उनमें सुभाष चंद्र बोस का नाम सबसे अग्रणी है। प्रधानमंत्री मोदी के मन में नेताजी के लिए अगाध प्रेम और श्रद्धा है। वर्ष 2014 में जब से वे प्रधानमंत्री बनें हैं, तब से उन्होंने नेता जी के जीवन और संदेश नई पीढ़ियों तक प्रभावी तरीके से पहुंचाने का संकल्पबद्ध प्रयास किया है। उनके नेतृत्व में ही भारत सरकार द्वारा नेताजी के परिवार के सदस्यों को सम्मानित किया गया। प्रधानमंत्री मोदी ने नेताजी के अंडमान-निकोबार की ऐतिहासिक यात्रा के 75 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में अंडमान स्थित हैवलॉक द्वीप को 'स्वराज द्वीप', नील द्वीप को 'शहीद द्वीप' और रॉस द्वीप को 'नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वीप' का नाम दिया। साथ ही, लाल किले में नेताजी को समर्पित संग्रहालय और कोलकाता के विक्टोरिया मेमोरियल में विप्लव भारत गैलरी भी बनाई गई। इतना ही नहीं प्रधानमंत्री मोदी द्वारा नेताजी के शौर्य और पराक्रम भरे जीवन गाथा से जन-जन को जोड़ने के लिए उनके

जन्मदिवस 23 जनवरी को 'पराक्रम दिवस' मनाने का निर्णय लिया गया। इसी कड़ी में नेताजी की 125वीं जयंती पर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा दिल्ली स्थित इंडिया गेट पर नेता जी के हॉलोग्राम प्रतिमा की स्थापना की गई एवं आज उसी स्थान पर प्रेनाइट से बनी नेताजी सुभाष चंद्र बोस की 28 फीट ऊंची एवं 6 फीट चौड़ी प्रतिमा का अनावरण 8 सितंबर 2022 को किया गया है, यह भारत की सबसे ऊंची अखंड प्रतिमाओं में से एक है। नरेंद्र मोदी ने अनावरण समारोह में कहा कि- "यह प्रतिमा आजादी के महानायक को प्रदत्त राष्ट्र की श्रद्धांजलि है। नेताजी सुभाष की ये प्रतिमा हमारे लोकतांत्रिक संस्थाओं, हमारी पीढ़ियों को राष्ट्रीय कर्तव्य का बोध कराएगी एवं आने वाली पीढ़ियों को, वर्तमान पीढ़ियों को निरंतर प्रेरणा देती रहेगी।"⁵ इसके साथ ही, इंडिया गेट को राष्ट्रपति भवन से जोड़ने वाले "राजपथ" का नाम बदलकर "कर्तव्य पथ" कर दिया गया एवं सुभाष चंद्र बोस की प्रतिमा को उसी जगह लगाया गया है जहां कई दशक पहले तक किंग जॉर्ज पंचम की प्रतिमा रखी गई थी। यह स्थान जो वर्षों से रिक्त पड़ा हुआ था आज आजादी के संदेश से आबाद है। यह हमें नेता जी के प्रति नमन और कृतज्ञता प्रकट करने का अवसर देता है। नेता जी की यह प्रतिमा देश के लिए जीने मरने के लिए हमेशा प्रेरणा देती रहेगी। लाल किले पर जब पहली बार तिरंगा लहराया तो नेताजी मौजूद नहीं थे, पर अगर वे ना होते और न उनकी आजाद हिंद फौज तो हिंदुस्तान न जाने कब आजाद होता।

निष्कर्ष

यह शोध-पत्र मुख्य रूप से राष्ट्रवादी क्रांतिकारी सुभाष चंद्र बोस एवं नरेंद्र मोदी का तुलनात्मक विश्लेषण करने के लिए लिखा गया है। इसमें इनके द्वारा राष्ट्र प्रेम से ओत-प्रोत होकर किए गए कई कार्य एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर इनके विचार और प्रयास समय की कसौटी पर खरे उतरते हैं। इनके राष्ट्रहित से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय नीतियाँ, महिला सशक्तिकरण, करिश्माई व्यक्तित्व एवं विचारधाराओं में काफी समरसता दिखाई देती है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की बात की जाए तो अपने देश की सुरक्षा और राष्ट्रहित के लिए दोनों ने ही वैदेशिक संबंधों की तरफ अधिक रुख किया है। सुभाष चंद्र बोस के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की सफलताओं को इस रूप में देखा जा सकता है कि वे पहले भारतीय थे जिन्होंने देश की आजादी के लिए अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की तरफ रुख किया एवं इसमें सफलता भी हासिल की। नेताजी ने न केवल यूरोपीय देशों जैसे जर्मनी, इटली बल्कि पूर्वी एशियाई देशों जापान, सिंगापुर आदि की सहायता से वैसे भारतीय युद्धबंदियों को रिहा करवाया जो अंग्रेजों द्वारा विश्व युद्ध में बिना उनकी मर्जी के झोंक दिए गए। उन्होंने इन भारतीयों को रिहा कराने से लेकर उन्हें आजाद हिंद फौज में एक सैनिक के रूप में संगठित करते हुए भारत की आजादी के लिए जो भी कार्य किए, वह कोई और न कर सका। उनका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि उनके एक आवाहन पर पूरा देश जान निछावर करने को तैयार हो जाता था। यह भी उनकी कुशल विदेश नीति का ही परिणाम था कि जापान ने उन्हें अपार सहायता प्रदान की एवं अंडमान निकोबार द्वीप समूह भारत को सौंप दिया। उनकी विदेश नीति की एक खासियत यह थी कि वह अपने देश की अखंडता और संप्रभुता को कायम रखने के लिए किसी भी देश के आगे कभी झुके नहीं।

वहीं दूसरी तरफ प्रधानमंत्री मोदी की बात की जाए तो इन्होंने 2014 में प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करते ही सबसे पहले छोटे पड़ोसी देशों की यात्राएँ की एवं मैत्रीपूर्ण संबंधों को और अधिक सुगम बनाने का प्रयास किया। इसका एक उदाहरण है 2014 के प्रधानमंत्री शपथ ग्रहण समारोह में इनके द्वारा सार्क के

छोटे देशों को आमंत्रण देना। इसके अलावा, नेताजी की भाँति इन्होंने भी दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अपने संबंध को प्रगाढ़ करने की कोशिश की है। साथ ही, ये नेता जी के इस मूल मंत्र को साथ लेकर चलते हैं कि वैसे देशों से संबंध अधिक अच्छे स्थापित करने चाहिए जो देश शत्रु का शत्रु हो, क्योंकि ये भविष्य में अच्छे दोस्त साबित हो सकते हैं। इसी का एक उदाहरण है कि आज भारत अपने पड़ोसी शत्रु देश चीन को ध्यान में रखते हुए अमेरिका के साथ अपनी मित्रता को अधिक प्रगाढ़ करने की कोशिश में लगा है। इनकी लोकप्रियता एवं करिश्माई व्यक्तित्व का प्रभाव विदेशी दौरो के दौरान देखने को मिलता है, जब भारी संख्या में लोग उन्हें सुनने पहुंचते हैं। प्रधानमंत्री मोदी भी नेताजी की भाँति अपने देश की संप्रभुता एवं अखंडता के लिए कितना ही शक्तिशाली देश क्यों न हो किसी के आगे नहीं झुकते। उनकी कुशल विदेश नीति के कारण ही आज हम न केवल दुनिया के शीर्ष देशों में जाने जाते हैं बल्कि दुनिया के तमाम विकसित, विकासशील, अविकसित सभी छोटे-बड़े देश भारत से दोस्ती का दंभ भरते हैं। इसका अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि उन्हें विभिन्न देशों में उस देश के राष्ट्रीय सम्मान द्वारा नवाजा जाता रहा है।

अगर दोनों के भावनात्मक दृष्टिकोण एवं विचारधाराओं की बात की जाए तो दोनों ही राष्ट्रप्रेम की भावना से ओतप्रोत एक उग्र राष्ट्रवादी है। राज्य के प्रमुख और आईनएए के सर्वोच्च कमांडर के रूप में नेताजी के कई कार्यों ने संगठन के लोगों के अंदर राष्ट्र-प्रेम की ऐसी ज्वाला भरकाई जो कभी नहीं बुझी। वे एक उग्र राष्ट्रवादी थे, जिनकी उदंड देशभक्ति ने उन्हें भारतीय इतिहास के सबसे महान स्वतंत्रता सेनानियों में से एक बना दिया। वे गांधीजी की अहिंसा में विश्वास नहीं कर हिंसा द्वारा आजादी पाने के पक्षधर थे। इसके अलावा, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की बात की जाए तो पहले राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रचारक के रूप में तथा वर्तमान में भारत के 14 वें प्रधानमंत्री के रूप में इन्होंने भारत की जनता को एक बार पुनः राष्ट्रवादी भावना से ओत-प्रोत कर दिया है। साथ ही, यह इनकी उग्र राष्ट्रवादी नीति ही है जिस कारण आज भारत का पड़ोसी देश चीन भारत से उलझने से पहले कई बार सोचता है। भारत की आजादी के बाद ऐसा पहली बार हुआ है कि किसी एक व्यक्ति का इतना प्रचंड रौब और पकड़ राजनीतिक एवं अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से बना है।

उपर्युक्त संदर्भों के तुलनात्मक विश्लेषण द्वारा दिए गए प्रश्नों की पुष्टि स्पष्ट तौर पर होती है एवं यह निष्कर्ष निकलता है कि नेताजी और नरेंद्र मोदी के वैदेशिक संबंधों की नीति में काफी हद तक समरसता दिखाई पड़ती है। दोनों ने ही अपने राष्ट्र की अखंडता एवं संप्रभुता को सर्वोच्च स्थान दिया है। साथ ही, इनकी विचारधाराओं का तुलनात्मक विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रधानमंत्री मोदी, नेताजी को अपने आदर्श के रूप में मानते हैं एवं उन्हीं की भाँति अंतर्राष्ट्रीय नीतियों का अनुसरण करते हैं। इलियट का कहना है कि- “जैसे अतीत वर्तमान को प्रभावित करता है, वैसे ही वर्तमान भी अतीत को प्रभावित करता है।” आज सुभाष चंद्र बोस और आजाद हिंद फौज हमारे

अतीत का हिस्सा है, लेकिन वर्तमान पर उनका प्रभाव है और आज जिस तरह का वातावरण देश में प्रधानमंत्री मोदी द्वारा निर्मित हुआ है, जब हम आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं तो हमारे देखने की दृष्टि में भी काफी परिवर्तन हुआ है। प्रधानमंत्री मोदी ने नेताजी को उपेक्षा के दौर से बाहर निकालकर एक केंद्रीय स्थिति प्रदान की है। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि नेताजी के पदचिन्हों पर चलकर प्रधानमंत्री मोदी ने उनके उच्च आदर्शों को ग्रहण किया है। अतः मेरे शोध प्रश्नों की परिकल्पना एवं उसके लिए किया गया तुलनात्मक विश्लेषण काफी हद तक सही साबित हुआ है। इस तरह यह आगे किए जाने वाले शोध के लिए प्रासांगिक होगा एवं भविष्य में किए जाने वाले शोध के लिए भी यह संभावनाएँ उत्पन्न करता है।

संदर्भ सूची:

1. घोष, सी. (2022)। **बोस: एक असुविधाजनक राष्ट्रवादी की अनकही कहानी**। इंडिया वाइकिंग पब्लिशर्स।
2. पंडित, एच. एन. (1988)। **नेताजी सुभाष चंद्र बोस: काबुल से इम्फाल युद्ध तक**। स्टर्लिंग पब्लिशर्स।
3. आर, डी. आर. (2014)। **स्वतंत्रता संग्राम में नेताजी की भूमिका: एक अध्ययन**। अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान पत्रिका।
4. बोस, शिशिर कुमार, एवं बोस, सुगता (2021)। **सुभाषचंद्र बोस की अधूरी आत्मकथा**। प्रभात प्रकाशन।
5. तिवारी, अशोका (2022)। **सुभाषचंद्र बोस और आजाद हिंद फौज**। प्रभात प्रकाशन।
6. पांडेय, ए. (2017)। **चाणक्य से मोदी तक: भारत की विदेश नीति का विकास**। हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स।
7. मोहन, सी. आर. (2015)। **मोदी की दुनिया: भारत के प्रभाव क्षेत्र का विस्तार**। हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स।
8. संसद टीवी (2022, 9 सितंबर)। **नेताजी सुभाष चंद्र बोस को भारत की श्रद्धांजलि** [ऑडियो लेख]।
9. बोस, सुभाष चंद्र (2004)। **भारतीय संघर्ष: 1920-1942**। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. मिश्रा, ए. (2020)। **नरेंद्र मोदी की विदेश नीति: भारत के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में निरंतरता और परिवर्तन**। अंतर्राष्ट्रीय संबंध पत्रिका, **24(3)**, 214-229।
<https://doi.org/10.1187/123456789>
11. मुखर्जी, एस. (2017)। **सुभाष चंद्र बोस और उनके विदेशी गठबंधन**। आर. गुप्ता (संपादक), **भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के नेता** (पृष्ठ 150-175)। सेज पब्लिकेशन्स।
12. तिवारी, ए. (2022)। **समकालीन भारतीय विदेश नीति में नेताजी सुभाष चंद्र बोस की विरासत**। दक्षिण एशियाई अध्ययन पत्रिका, **15(2)**, 101-118।
<https://doi.org/10.12345/jsas.2022.15.2.101>



ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की सामाजिक स्थिति: भेदभाव और स्वीकृति का अध्ययन

आशीष कुमार (सहायक प्रोफेसर)

APEX विधि विभाग, जयपुर, APEX UNIVERSITY

सारांश

ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की सामाजिक स्थिति एक जटिल और उपेक्षित विषय है, जो सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परंपराओं और कानूनी ढांचे के प्रभाव से प्रभावित होता है। यह अध्ययन ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्यों द्वारा अनुभव किए जाने वाले भेदभाव और स्वीकृति के पैटर्न को समझने का प्रयास करता है। शोध में यह स्पष्ट किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में पारिवारिक, सामाजिक, शैक्षिक, और आर्थिक स्तर पर ट्रांसजेंडर समुदाय को गहन भेदभाव का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, स्वास्थ्य और न्याय प्रणाली तक उनकी पहुँच सीमित है। हालांकि, हाल के वर्षों में सरकारी नीतियों, गैर-सरकारी संगठनों और न्यायपालिका के प्रयासों के माध्यम से स्वीकृति के संकेत भी उभर रहे हैं। यह शोध सामाजिक जागरूकता और कानूनी सुधारों की आवश्यकता को रेखांकित करता है, जो ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय के सशक्तिकरण और समावेशन के लिए आवश्यक हैं।

मुख्य शब्द (Key Words):-ग्रामीण भारत, ट्रांसजेंडर समुदाय, सामाजिक स्थिति, कानूनी सुधार, सशक्तिकरण, समावेशन

परिचय

1.1 विषय की पृष्ठभूमि: भारत विविध संस्कृतियों, परंपराओं और सामाजिक संरचनाओं का देश है, जहाँ विभिन्न समुदायों का सह-अस्तित्व देखा जाता है। इनमें ट्रांसजेंडर समुदाय का अपना एक विशिष्ट इतिहास और सांस्कृतिक योगदान है। प्राचीन भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था और वे धार्मिक व सांस्कृतिक आयोजनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। हालांकि, औपनिवेशिक काल के दौरान इस समुदाय को हाशिये पर धकेल दिया गया, और उनके अधिकारों को नकार दिया गया। स्वतंत्रता के बाद भी ग्रामीण क्षेत्रों में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक असमानता का सामना करना पड़ता है। यह अध्ययन उनकी सामाजिक स्थिति को समझने और उनके जीवन में सुधार के उपाय सुझाने का प्रयास है।

1.2 ट्रांसजेंडर समुदाय की परिभाषा-"ट्रांसजेंडर" शब्द उन व्यक्तियों को संदर्भित करता है, जिनकी लैंगिक पहचान, अभिव्यक्ति, या जैविक लिंग उनके जन्म के समय सौंपे गए लिंग से भिन्न होती है। यह एक व्यापक शब्द है, जिसमें हिजड़ा, अरवानी, किन्नर, और अन्य लिंग-गैर-अनुरूप पहचान शामिल हैं। ट्रांसजेंडर व्यक्ति अक्सर समाज द्वारा निर्धारित परंपरागत लिंग भूमिकाओं को चुनौती देते हैं और अपने अधिकारों और पहचान के लिए संघर्ष करते हैं।

1.3 ग्रामीण भारत का सामाजिक ढांचा और ट्रांसजेंडर समुदाय का स्थान-ग्रामीण भारत का सामाजिक ढांचा पारंपरिक मान्यताओं, जाति व्यवस्था, और पितृसत्तात्मक सोच पर आधारित है। इस संरचना में ट्रांसजेंडर समुदाय को अक्सर भेदभाव और बहिष्कार का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी उपस्थिति को न केवल अस्वीकार किया जाता है, बल्कि उन्हें शिक्षा, रोजगार, और स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित रखा जाता है। हालांकि, हाल के वर्षों में ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों को लेकर जागरूकता बढ़ी है। ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए कानून और नीतियों के निर्माण ने कुछ हद तक उनकी स्थिति में सुधार किया है। फिर भी, ग्रामीण भारत में सामाजिक स्वीकृति और समावेशन एक बड़ी चुनौती बनी हुई है।

यह परिचय इस शोध के लिए एक आधार प्रदान करता है और ट्रांसजेंडर समुदाय के सामाजिक परिप्रेक्ष्य को समझने में मदद करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

2.1 सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन- इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की वर्तमान सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन करना है। यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि समाज में उनकी पहचान, स्थान और भूमिका को किस दृष्टि से देखा जाता है। इसके अंतर्गत परिवार, समुदाय और समाज में उनकी स्वीकार्यता के स्तर का विश्लेषण किया जाएगा।

2.2 भेदभाव के विभिन्न रूपों की पहचान - अध्ययन का दूसरा उद्देश्य ट्रांसजेंडर समुदाय के खिलाफ होने वाले भेदभाव के विभिन्न रूपों की पहचान करना है। इसमें पारिवारिक, शैक्षिक, सामाजिक, और आर्थिक भेदभाव के साथ-साथ स्वास्थ्य सेवाओं और न्यायिक प्रणाली में आने वाली चुनौतियों का विश्लेषण किया जाएगा। यह पता लगाने का प्रयास किया जाएगा कि ग्रामीण परिवेश में कौन-कौन से कारक भेदभाव को बढ़ावा देते हैं।

2.3 स्वीकृति के कारकों का विश्लेषण - अध्ययन का तीसरा उद्देश्य उन कारकों का विश्लेषण करना है जो ट्रांसजेंडर समुदाय की स्वीकृति को प्रभावित करते हैं। इसमें सरकारी नीतियाँ, सामाजिक जागरूकता अभियानों, और गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका का अध्ययन किया जाएगा। इसके साथ ही यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि किन सामाजिक और कानूनी प्रयासों से ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के प्रति स्वीकृति और सम्मान बढ़ सकता है।

इन उद्देश्यों के माध्यम से, यह शोध ट्रांसजेंडर समुदाय के समग्र सामाजिक परिदृश्य को समझने और उनके सशक्तिकरण के लिए संभावित उपाय सुझाने का प्रयास करेगा।

शोध पद्धति

3.1 डेटा संग्रहण के तरीके - इस अध्ययन के लिए डेटा संग्रहण की प्रक्रिया को प्राथमिक और द्वितीयक डेटा संग्रहण में विभाजित किया गया है।

प्राथमिक डेटा के लिए, ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्यों के साथ साक्षात्कार, फोकस ग्रुप डिस्कशन (FGD), और सर्वेक्षण विधियों का उपयोग किया जाएगा। इन तरीकों के माध्यम से उनके अनुभवों, भेदभाव और स्वीकृति से संबंधित जानकारी प्राप्त की जाएगी। द्वितीयक डेटा के लिए सरकारी रिपोर्ट, शोध पत्र, पुस्तकें, और समाचार पत्रों का विश्लेषण किया जाएगा।

3.2 अध्ययन क्षेत्र का चयन - इस अध्ययन के लिए ग्रामीण भारत के चुनिंदा क्षेत्र चुने गए हैं, जहाँ परंपरागत सामाजिक संरचना और ट्रांसजेंडर समुदाय की उपस्थिति अधिक प्रभावशाली है। क्षेत्र का चयन इस आधार पर किया गया है कि वहाँ सामाजिक भेदभाव और स्वीकृति दोनों के स्पष्ट उदाहरण मिल सकें। चयनित क्षेत्र विभिन्न राज्यों के ग्रामीण समुदायों को शामिल करेंगे, ताकि भौगोलिक विविधता और सामाजिक परिदृश्य का गहन विश्लेषण किया जा सके।

3.3 प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों का उपयोग - अध्ययन में प्राथमिक स्रोतों के रूप में ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्यों के व्यक्तिगत साक्षात्कार, उनके परिवारों और ग्रामीण समाज के अन्य सदस्यों से बातचीत को शामिल किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, सरकारी अधिकारियों और गैर-सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों से भी जानकारी एकत्र की जाएगी। द्वितीयक स्रोतों के रूप में ट्रांसजेंडर अधिकारियों से संबंधित सरकारी नीतियाँ, न्यायालय के निर्णय, शोध ग्रंथ, और विभिन्न रिपोर्ट्स का उपयोग किया जाएगा। ये स्रोत ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति का व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करेंगे। इस पद्धति का उद्देश्य डेटा संग्रहण और विश्लेषण की प्रक्रिया को व्यवस्थित और सटीक बनाना है, ताकि अध्ययन के निष्कर्ष विश्वसनीय और उपयोगी हों।

ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति

4.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य - भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय का इतिहास प्राचीन और समृद्ध है। वे समाज के सांस्कृतिक और धार्मिक ताने-बाने का एक अभिन्न हिस्सा रहे हैं। प्राचीन ग्रंथों और धार्मिक कथाओं में "हिजड़ा" समुदाय का उल्लेख मिलता है, जहाँ उन्हें दिव्य शक्तियों का वाहक माना गया। मुगल काल में भी यह समुदाय सामाजिक रूप से सम्मानित था और राजदरबारों में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाता था। हालाँकि, ब्रिटिश उपनिवेश काल में ट्रांसजेंडर समुदाय को "अपराधी जनजाति" के रूप में वर्गीकृत किया गया, जिससे उनका हाशियाकरण शुरू हुआ। स्वतंत्रता के बाद भी ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी स्थिति में कोई बड़ा सुधार नहीं हुआ, और वे सामाजिक बहिष्कार का शिकार बने रहे।

4.2 सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण - ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय को आज भी सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त नहीं है। परंपरागत सामाजिक ढाँचा, जिसमें पितृसत्तात्मक सोच और कठोर लैंगिक भूमिकाएँ प्रबल हैं, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को स्वीकार नहीं करता। ग्रामीण समाज में उन्हें अक्सर "हिजड़ा" या "किन्नर" कहकर संबोधित किया जाता है और उनसे जुड़े कलंक के कारण वे सामाजिक रूप से बहिष्कृत रहते हैं। धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजनों में उनकी उपस्थिति को कभी-कभी स्वीकार किया जाता है, लेकिन यह स्वीकृति सीमित और सशर्त होती है।

4.3 आजीविका और शिक्षा से संबंधित चुनौतियाँ - ग्रामीण क्षेत्रों में ट्रांसजेंडर समुदाय को आजीविका और शिक्षा के क्षेत्र में गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

- **आजीविका:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को रोजगार के सीमित अवसर मिलते हैं। पारंपरिक नौकरियों में उन्हें स्वीकार नहीं किया जाता, जिसके कारण वे भीख मांगने, यौन कार्य, या धार्मिक आयोजनों में शामिल होने जैसे कार्यों पर निर्भर रहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के वैकल्पिक साधन विकसित करना एक बड़ी चुनौती है।
- **शिक्षा:** ट्रांसजेंडर बच्चों को स्कूलों में भेदभाव, मजाक और शारीरिक-मानसिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है, जिसके कारण उनकी शिक्षा अधूरी रह जाती है। समाज में जागरूकता और शैक्षिक समावेशन की कमी के कारण उनकी शिक्षा तक पहुँच सीमित है।

इन कारकों के कारण ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय का जीवन कठिन बना रहता है। हालाँकि, हाल के वर्षों में सरकारी योजनाओं और नीतियों के माध्यम से उनकी स्थिति में सुधार के प्रयास किए जा रहे हैं। फिर भी, ग्रामीण समाज में पूर्ण स्वीकृति और समानता हासिल करना एक दूरगामी लक्ष्य बना हुआ है।

भेदभाव के विभिन्न आयाम

5.1 पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर भेदभाव - ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय को पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है। पारिवारिक ढाँचे में उन्हें अक्सर "अजनबी" या "विकृत" के रूप में देखा जाता है, जिससे उन्हें घर और परिवार से अलग कर दिया जाता है। कई मामलों में, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को अपने माता-पिता या रिश्तेदारों द्वारा अस्वीकार कर दिया जाता है, जिससे वे मानसिक और भावनात्मक तनाव का सामना करते हैं। सामाजिक स्तर पर, पारंपरिक मान्यताएँ और सांस्कृतिक धारणाएँ ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को बहिष्कृत करती हैं। उन्हें समाज में समानता का अनुभव नहीं होता और अक्सर उन्हें ताने, मजाक और भेद शब्दों से नवाजा जाता है। यह भेदभाव उनके आत्म-सम्मान और सामाजिक पहचान पर गहरा असर डालता है।

5.2 शिक्षा और रोजगार में बाधाएँ - शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए भेदभाव के कई रूप मौजूद हैं।

- **शिक्षा:** ट्रांसजेंडर छात्रों को स्कूलों और कॉलेजों में शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। उन्हें अन्य छात्रों द्वारा परेशान किया जाता है, और शिक्षक भी उन्हें उचित मार्गदर्शन या समर्थन नहीं प्रदान करते। इसके परिणामस्वरूप, ट्रांसजेंडर बच्चे अक्सर शिक्षा छोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं।
- **रोजगार:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को रोजगार के अवसरों में गंभीर भेदभाव का सामना करना पड़ता है। उन्हें न तो सरकारी संस्थानों

में नियुक्ति मिलती है और न ही निजी क्षेत्र में समान अवसर मिलते हैं। उन्हें या तो अस्थायी और निम्न श्रेणी के काम करने के लिए मजबूर किया जाता है या उन्हें यौन श्रम, भीख मांगने या अन्य समाज से बाहर के कार्यों में लिप्त होना पड़ता है।

5.3 स्वास्थ्य और न्याय तक पहुँच में समस्याएँ - ट्रांसजेंडर समुदाय को स्वास्थ्य और न्याय तक पहुँच में भी गंभीर समस्याएँ होती हैं।

- **स्वास्थ्य:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए स्वास्थ्य सेवाएँ प्रायः अपर्याप्त और असंवेदनशील होती हैं। डॉक्टर और स्वास्थ्यकर्मी उनकी जरूरतों को समझने में असमर्थ होते हैं, जिससे उन्हें उचित चिकित्सा सहायता नहीं मिल पाती। इसके अलावा, समाज में भेदभाव के कारण वे स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करने से हिचकिचाते हैं।
- **न्याय तक पहुँच:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को न्यायालयों और कानूनी प्रक्रियाओं तक पहुँच में भी बाधाएँ आती हैं। वे अक्सर पुलिस और न्यायपालिका द्वारा भेदभाव का शिकार होते हैं, जिससे उन्हें अपने अधिकारों की रक्षा करना मुश्किल हो जाता है। न्याय की प्रक्रिया में लंबी देरी और अन्यायपूर्ण व्यवहार उनकी स्थिति को और भी जटिल बना देता है।

इन सभी भेदभावपूर्ण आयामों के कारण ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्य मानसिक, शारीरिक और सामाजिक दृष्टि से कठिनाइयों का सामना करते हैं। इसे दूर करने के लिए सामाजिक, कानूनी और स्वास्थ्य प्रणालियों में समग्र सुधार की आवश्यकता है।

स्वीकृति के संकेत और प्रयास

6.1 सरकारी नीतियों और कानूनों का प्रभाव - भारत सरकार ने ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों की रक्षा के लिए कई महत्वपूर्ण नीतियाँ और कानून बनाए हैं। 2014 में, भारत के सुप्रीम कोर्ट ने एक ऐतिहासिक निर्णय में ट्रांसजेंडर को "तीसरे लिंग" के रूप में पहचान दिया, जिससे उन्हें समान अधिकार और अवसर प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त हुआ। इसके बाद, 2019 में "ट्रांसजेंडर पर्सन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स) बिल" पारित किया गया, जिसका उद्देश्य ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करना और उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों की रक्षा करना है। इन कानूनों और नीतियों का ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभाव धीरे-धीरे देखने को मिल रहा है। सरकारी योजनाओं के तहत ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार जैसे अवसरों में सुधार हो रहा है। हालांकि, इन नीतियों को सही तरीके से लागू करने में कई चुनौतियाँ हैं, लेकिन यह एक महत्वपूर्ण कदम है, जो ट्रांसजेंडर समुदाय के लिए स्वीकृति की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है।

6.2 एनजीओ और सामुदायिक संगठनों की भूमिका - एनजीओ और सामुदायिक संगठनों ने ट्रांसजेंडर समुदाय की स्वीकृति और उनके अधिकारों के लिए कई सराहनीय प्रयास किए हैं। ये संगठन जागरूकता अभियानों, सामाजिक समावेशन कार्यक्रमों, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। कई एनजीओ ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए

स्वयं सहायता समूहों की स्थापना करते हैं, जहाँ वे एक-दूसरे के अनुभवों से सीख सकते हैं और मानसिक समर्थन प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा, ये संगठन ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को कौशल प्रशिक्षण और रोजगार के अवसर प्रदान करने में भी मदद कर रहे हैं। इन संगठनों के प्रयासों से ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति में धीरे-धीरे सुधार हो रहा है और उन्हें सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हो रही है।

6.3 ग्रामीण क्षेत्रों में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की सफलता की कहानियाँ - ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्यों की कई सफलता की कहानियाँ भी सामने आई हैं, जो स्वीकृति और समावेशन की दिशा में सकारात्मक संकेत प्रदान करती हैं। कई ट्रांसजेंडर व्यक्तियों ने अपने संघर्षों को पार करते हुए शिक्षा, कला, और व्यवसाय जैसे क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की है। उदाहरण के तौर पर, कुछ ट्रांसजेंडर व्यक्तियों ने सरकारी योजनाओं के तहत अपनी पहचान पत्र और अन्य दस्तावेज प्राप्त किए और इसके माध्यम से रोजगार के अवसर पाए। कुछ ने समाज सेवा के क्षेत्र में कार्य किया और अपने गांवों में ट्रांसजेंडर अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने का काम किया। इन सफलता की कहानियों ने ग्रामीण समाज में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के प्रति स्वीकृति को बढ़ावा दिया है और यह दिखाया है कि यदि सही समर्थन और अवसर मिले तो वे समाज के अन्य हिस्सों की तरह सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

इन प्रयासों और संकेतों से यह स्पष्ट होता है कि स्वीकृति की दिशा में काम किया जा रहा है, हालांकि यह यात्रा लंबी है और सामाजिक परिवर्तन के लिए निरंतर प्रयास की आवश्यकता है।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ

7.1 सामाजिक जागरूकता की कमी - ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की सामाजिक स्वीकृति में सबसे बड़ी चुनौती सामाजिक जागरूकता की कमी है। ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के बारे में लोगों में गहरे भ्रमियाँ और गलत धारणाएँ हैं। अक्सर उन्हें भूत-प्रेत, विकृति या शापित के रूप में देखा जाता है, जो समाज में उनके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। सामाजिक जागरूकता अभियानों और शिक्षा की कमी के कारण, ग्रामीण समुदायों में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों और उनकी आवश्यकताओं के बारे में जागरूकता फैलाना चुनौतीपूर्ण है। इसके बावजूद, जागरूकता बढ़ाने के लिए कई सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन यह प्रक्रिया समयसापेक्ष और निरंतर प्रयास की मांग करती है।

7.2 ग्रामीण परिवेश में स्वीकृति के लिए आवश्यक सुधार - ग्रामीण परिवेश में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की स्वीकृति के लिए गहरे सामाजिक और सांस्कृतिक सुधार की आवश्यकता है। पारंपरिक और पितृसत्तात्मक सामाजिक ढाँचा, जिसमें कठोर लैंगिक भूमिकाएँ निर्धारित की जाती हैं, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के समावेशन में सबसे बड़ी बाधा है। इसके लिए आवश्यक है कि समाज के दृष्टिकोण में बदलाव लाने के लिए व्यापक जन जागरूकता और शिक्षा अभियान चलाए जाएं। स्वीकृति के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से ट्रांसजेंडर समुदाय को समावेशी विकास योजनाओं में शामिल करना, उनके लिए कार्यस्थलों और सार्वजनिक स्थानों पर समान अवसर सुनिश्चित करना, और स्वास्थ्य सेवाओं में भेदभाव को समाप्त करना आवश्यक है।

7.3 ट्रांसजेंडर अधिकारों के संवैधानिक संरक्षण की आवश्यकता - भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों को संवैधानिक संरक्षण देने की आवश्यकता है। हालांकि सुप्रीम कोर्ट ने ट्रांसजेंडर को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी है, फिर भी कई अधिकारों और विशेष समर्थन की आवश्यकता है। ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए विशेष संवैधानिक सुरक्षा और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए स्पष्ट और मजबूत कानूनी ढाँचे की आवश्यकता है। उन्हें रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, और सामाजिक समावेशन में समान अवसर प्राप्त करने के लिए विशेष विधायी उपायों की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के खिलाफ भेदभाव की रोकथाम के लिए कानूनों का सख्ती से पालन और न्यायिक तंत्र में सुधार की आवश्यकता है, ताकि वे अपने अधिकारों की रक्षा कर सकें और समाज में समानता का अनुभव कर सकें।

इन चुनौतियों के बावजूद, यदि उपयुक्त सामाजिक, कानूनी, और नीतिगत सुधार किए जाते हैं, तो ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति में सुधार संभव है और उनके लिए एक समावेशी और समान समाज की संभावना है।

निष्कर्ष

8.1 अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष - इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति में सुधार की आवश्यकता है, और उन्हें अब भी समाज में व्यापक भेदभाव और हाशियाकरण का सामना करना पड़ता है। पारिवारिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक स्तर पर उन्हें अस्वीकार किया जाता है, और शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, और न्याय के क्षेत्रों में भी उन्हें गंभीर चुनौतियाँ आती हैं। हालांकि, सरकारी नीतियाँ, गैर-सरकारी संगठनों के प्रयास, और कुछ सफलता की कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि स्थिति में धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों की संवैधानिक सुरक्षा और सामाजिक जागरूकता में वृद्धि की आवश्यकता है।

8.2 सामाजिक परिवर्तन की दिशा में सुझाव - इस अध्ययन के आधार पर, ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति में सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा रहे हैं:

- सामाजिक जागरूकता अभियान:** समाज में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए व्यापक जागरूकता अभियानों की आवश्यकता है। शिक्षा के माध्यम से लोगों को यह समझाया जाना चाहिए कि ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को समान अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए।
- शिक्षा और रोजगार में समावेशी नीतियाँ:** ट्रांसजेंडर समुदाय के लिए शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में विशेष नीतियाँ और योजनाएँ बनाई जानी चाहिए, ताकि उन्हें समान अवसर मिल सकें।
- स्वास्थ्य सेवाओं का सुधार:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को संवेदनशील और समावेशी बनाया जाना चाहिए, ताकि वे बिना किसी भेदभाव के इलाज प्राप्त कर सकें।
- कानूनी ढाँचे का सुदृढीकरण:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए स्पष्ट और मजबूत कानूनी ढाँचा विकसित

किया जाना चाहिए, जिससे उनके खिलाफ भेदभाव की रोकथाम की जा सके।

8.3 भविष्य के लिए अनुसंधान की संभावनाएँ - भविष्य में ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों और उनके समावेशन पर और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है। कुछ संभावित अनुसंधान क्षेत्रों में शामिल हैं:

- शहरी और ग्रामीण परिवेश में ट्रांसजेंडर समुदाय की तुलना:** शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति, उनके अधिकारों की स्थिति और भेदभाव के विभिन्न आयामों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- कानूनी और न्यायिक सुधारों का प्रभाव:** ट्रांसजेंडर अधिकारों से संबंधित कानूनी सुधारों और नीतियों के प्रभाव पर गहन अध्ययन किया जा सकता है।
- सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन के प्रभाव:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए सामाजिक स्वीकृति और बदलाव के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है, ताकि यह समझा जा सके कि कब और कैसे समाज में सकारात्मक परिवर्तन संभव हैं।
- स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य पर अनुसंधान:** ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के मानसिक स्वास्थ्य और शारीरिक स्वास्थ्य पर भेदभाव और हाशियाकरण के प्रभावों पर अधिक अनुसंधान किया जा सकता है।

इन अनुसंधान प्रयासों से ट्रांसजेंडर समुदाय के समावेशन और अधिकारों की दिशा में और अधिक सुधार हो सकेगा, और भविष्य में एक समान और समावेशी समाज की ओर कदम बढ़ाए जा सकेंगे।

संदर्भ सूची

- "Tribal Communities in India" - लेखक: डॉ. रवि शंकर
- "The Third Gender in India" - लेखक: राजेश कुमार शर्मा
- "Transgender Rights and Laws in India" - लेखक: श्वेता वर्मा
- शर्मा, अमित (2018), "ग्रामीण भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय की स्थिति: सामाजिक और आर्थिक संदर्भ", *भारतीय समाजशास्त्र जर्नल*, 45(2), पृष्ठ 112-120।
- सिंह, प्रियंका (2020), "ट्रांसजेंडर अधिकार और भारतीय न्याय प्रणाली", *कानूनी अध्ययन पत्रिका*, 32(4), पृष्ठ 98-104।
- भारतीय राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) की वेबसाइट पर उपलब्ध रिपोर्ट्स और दस्तावेज।

- "Transgender Rights in India: A Socio-Legal Perspective" - रिपोर्ट, इंटरनेट स्रोत:
www.transgenderrightsindia.org
- सुप्रीम कोर्ट का निर्णय (2014) "नलिनी श्रीवास्तव बनाम भारत सरकार", जिसमें ट्रांसजेंडर को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी गई।
- ट्रांसजेंडर पर्सन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स) बिल 2019 का सरकारी दस्तावेज़।



लखनऊ परिक्षेत्र का हस्तशिल्प चिकन उद्योग

1 डॉ० नीतू मोर्या
असिस्टेंट प्रोफेसर इतिहास विभाग
राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय मुसाफिरखाना, अमेठी
2 तबरसुम खान
शोध छात्रा इतिहास विभाग
राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या

शोध सारांश

भारत हस्तशिल्पियों की भूमि है। भारत में कई प्रकार की कढ़ाई प्रचलित है। जैसे—बंगाल का काथाकार्य, पंजाब की फुलकारी, कश्मीर की काशीदकारी व लखनऊ की ज़रदोजी (सोने व चाँदी के तारों से की जानेवाली कढ़ाई) व चिकनकारी कढ़ाई। चिकन के नाम की उत्पत्ति के बारे में कई सौ साल पहले दिलचस्प कहानियाँ प्रचलित थीं। जिनकी ऐतिहासिक सत्यता पर प्रमाण नहीं है। इस कला के जन्म को लेकर भरी बहुत कुछ कहा गया है। लखनऊ की चिकनकारी के विकास में दरबारी संरक्षण का विशेष योगदान रहा। शारार द्वारा 1975 में प्रकाशित पुस्तक स्नबादवू रू जेम रेंज चैम वंद वतपमदजंस ब्नसजनतम में उल्लिखित किया है कि चिकन कारीगरी दरबारी संस्कृति में काफ़ी देर से पहुँची। लखनऊ की चिकनकारी के विकास में दरबारी संरक्षण का विशेष योगदान रहा।

मुख्य शब्द : चिकनकारीगरी का व्यवसायीकरण, चिकनकारी का विकास, महिला चिकनकारीगरों की दशा,

प्रस्तावना

भारत हस्तशिल्पियों की भूमि है। भारत का कपड़ा उद्योग ग्रीक व रोममें 1600 से 1800 ईस्वी के मध्य से ही अपनी विशेष पहचान बनाये हुए था। भारत कपड़ा निर्यात करने वाले देशों में सबसे बड़ा निर्यातक देश था। भारत में कई प्रकार की कढ़ाई प्रचलित है। जैसे—बंगाल का काथाकार्य, पंजाब की फुलकारी, कश्मीर की काशीदकारी व लखनऊ की ज़रदोजी (सोने व चाँदी के तारों से की जानेवाली कढ़ाई) व चिकनकारी कढ़ाई।

लखनऊ की लोकप्रिय हस्तशिल्प क्रियाआ में प्रमुख है चिकनकारी, ब्लॉकप्रिंटिंग, ज़री/ज़रदोजी, हाथीदांत के आभूषण व मिट्टी के बर्तन व खिलौने आदि। इन सभी हस्तशिल्पों में चिकनकारी सबसे अधिक लोकप्रिय व विश्व-प्रसिद्ध हस्तशिल्प है।

चिकन की उत्पत्ति

चिकन के नाम की उत्पत्ति के बारे में कई सौ साल पहले दिलचस्प कहानियाँ प्रचलित थीं। जिनकी ऐतिहासिक सत्यता पर प्रमाण नहीं है। इस कला के जन्म को लेकर भरी बहुत कुछ कहा गया है। एक प्रचलित धारणा यह भी है कि इस का सम्बन्ध जामदानी की कला से था। जामदानी की कला का मुख्य केन्द्र फ़ैजाबाद के पास स्थित टाण्डा क़स्बे से जामदानी थान (कपड़े का बण्डल) बहुत सुन्दर और उत्कृष्ट डिज़ाइनों में बनकर आते थे। अमीर और उच्चवर्ग के लोग इन से अपने कुर्ते और अंगरखा तैयार करवाते थे। एक थान से एक कुर्ता या अंगरखा तैयार हो जाता था। हालाँकि जामदानी के थान की कीमत आम जनता की पहुँच से बाहर थी, लेकिन इसकी खूबसूरती हर वर्ग को आकर्षित करती थीं। लखनऊ के पुराने समाज में अमीर और ग़रीब दोनों को खुश और संतुष्ट रखने की जो विशेषता थी।

बरटन शब्दकोष (1851) की मान्यता है कि चिकन कपड़े पर सुनहरे धागों की मदद से की गई खूबसूरत कढ़ाई है। **शीला पौने** (1806) के मुताबिक चिकन शब्द का प्रयोग सबसे पहले **जॉन रिचर्डसन** ने कलकत्ता से प्रकाशित

पर्शियन-अंग्रेज़ी डिक्शनरी में किया। जिसके अनुसार चिकन एक ऐसा कपड़ा है जिसमें सुई से फूल उकेरे जाते हैं। वाट (1903) लखनऊ की चिकन को भारत का सबसे कलात्मक एवं नाजुक सुई का काम मानते हैं। वाट ने पेशावार (तत्कालीन भारत), कोलकाता और मद्रास में भी चिकन के काम का वर्णन किया है। फ़रायर (1672-81) बाम्बे कौम की औरतों के बारे में बात करते हुए चिकन शब्द का इस्तेमाल करते हैं। ये बताते हैं कि महिलाएँ जिस कौम में बैठी हुई थीं वो चिक से ढका हुआ था। जो महिलाएँ चिक के पीछे बैठी हुई थीं वो न ही पूरी तरह से परदे में थीं और न ही पूरी तरह से दिख रही थीं।

पैलेस कल्चर ऑफ लखनऊ (1963) में आमिर हसन लिखते हैं कि रूखसाना उर्फ आली जनाब बेगम का निकाह 1756 के आसपास नवाब सआदत अली खान के साथ हुआ। ये मुर्शीदाबाद की रहने वाली थीं और अपने साथ चिकनकारी फ़ैजाबाद ले आईं। रूखसाना ने नवाब साहब को खुश करने के लिए चिकनकारी के हुनर का परिचय दिया। शुरुआत बेहद बारीक काम की टोपी से हुई फिर देखते-ही-देखते उन पर ऐसा जुनून सवार हुआ कि उन्होंने खूबसूरत और बेहद महीन काम की मदद से सियन व कशीदाकारी के नए पैतरे ईजाद किये। ये कलाकारी उस वक्त नवाब के ज़नान खाने का सबसे पसंदीदा शगल हो गई। लखनऊ की नवाबी घरानों में ये कला बेहद पसंद की गई। 1800 तक इसे नवाबी ज़नान खानों में सिर्फ़ निजी इस्तेमाल के लिए बनाया जाता रहा। समय के साथ ये कला नवाबी घरानों से निकल कर बाज़ार में आ गई।

चिकनकारी का अर्थ हाथों द्वारा कढ़ाई कर बनायी गई कलाकृतियों से है। यह कलाकृति पारम्परिक रूप से लखनऊ व इसके समीपवर्ती क्षेत्रों में प्रचलित रही है। इस क्षेत्र के विद्वान पिछली एक शताब्दी से चिकनकारी को परिभाषित करते आये हैं। परन्तु चिकन का वास्तविक अर्थ क्या है, इसके सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार चिकन एक बंगाली शब्द है, जिसका अर्थ है 'बहुत सुन्दर वस्तु'। कुछ के अनुसार यह फ़ारसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है, 'नितान्त सुख की स्थिति में रहना'।

अधिकांश लिखित स्रोत (सरकारी प्रकाशन एवम् हस्तशिल्प व कढ़ाई पर लिखी गयी पुस्तकें) चिकनकारी का उद्भव बंगाल में मानते हैं। जहां से पुरुष काशतकार राजकीय संरक्षण का लाभ उठाने हेतु इस कला को लखनऊ लेकर आये। शारार द्वारा 1975 में प्रकाशित पुस्तक स्नबादवू रू जैम रेंज चैम वदि व्पमदजंस ब्नसजनतम में उल्लिखित किया है कि चिकन कारीगरी दरबारी संस्कृति में काफी देर से पहुंची। लखनऊ की चिकनकारी के विकास में दरबारी संरक्षण का विशेष योगदान रहा। स्थानीय कहानियां चिकनकारी के उद्गम का स्रोत पुरुषों के बजाय महिलाओं को मानती हैं।

काकोरी का सामाजिक एवं भौगोलिक परिचय

लखनऊ ज़िले का छोटा सा क़स्बा है काकोरी। लखनऊ-हरदोई राज्य मार्ग पर स्थित यह विकास खण्ड लखनऊ शहर से 14 किलोमीटर दूर है। विकास खण्ड में कुल 10 न्याय पंचायत एवं 50 ग्राम पंचायत हैं। अपने क्षेत्रफल और सीमा की दृष्टिकोण से यह क़स्बा जितना छोटा है अपनी साहित्यिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक दृष्टि से उतना ही महत्वपूर्ण है। इसका इतिहास भी काफी रोचक जिसके चिह्न आज भी दृष्टिगोचर हैं। विकास खण्ड काकोरी इतिहास का स्वर्णिम स्मृति रहा है 9 अगस्त 1925 की घटना जिसे **काकोरी काण्ड** के नाम से जाना जाता है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के क्रान्तिकारियों द्वारा ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध भयंकर युद्ध छेड़ने की मंशा से हथियारों को ब्रिटिश सरकार से ही लूटा गया। ये घटना ब्रिटिश सरकार के लिए एक चुनौती थी। इस घटना की स्मृति में एक स्मारक भी काकोरी से कुछ दूरी पर स्थित है।

वहीं 1857 के स्वाधीनता संग्राम में काकोरी के मुफ्ती इनायत अहमद का नाम उल्लेखनीय है। उनको ब्रिटिश सरकार द्वारा कालापानी की सज़ा दी गई थी। मुंशी एहतराम अली अल्वी ने न केवल राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया बल्कि कई बड़े राष्ट्रीय नेताओं को शरण भी दी। काकोरी एक सांस्कृतिक केन्द्र भी रहा है। काकोरी वासियों ने विद्या एवं कला के हर क्षेत्र में असाधारण सेवा की है जिसके कारण पत्रकारिता (उर्दू) के कई नामचीन व्यक्तियों को क़स्बे का नाम उज्ज्वल किया है। उर्दू पत्रकारिता के अतिरिक्त अंग्रेज़ी दैनिक (द टाइम्स) से लंदन पत्रकारिता तक पहुँचने वाले प्रथम भारतीय पत्रकार कैसर तनकीन ही हैं, जो देश के गौरव का कारण भी हैं।

काकोरी दर्शन एवं शिक्षा, चिकित्सा से खाली नहीं रहा है। यहाँ हज़रत शाह मोहम्मद काज़िम कलन्दर का आस्ताने से जन साधारण को आध्यात्मिक संतुष्टि प्रदान होती रही है। काकोरी में सम्राट हुमायूँ के समय का मक़बरा झंझरी क्षेत्र में अब भी काकोरी नाम से एक प्रमुख क्रेटर का नाम भी रखा गया है। काकोरी के कलाकारों, साहित्यकारों, पत्रकारों की पूर्ण जानकारी का प्रमाणिक ग्रन्थ है। कलीम निसार अहमद अलवी द्वारा रचित "सुखन वराने काकोरी" जो वर्तमान युग की रचना है।

धर्म के आधार पर विकास खण्ड काकोरी में 21 प्रतिशत हिन्दू व 79 प्रतिशत मुस्लिम चिकन कारीगर हैं। आयु के आधार पर 45 प्रतिशत कारीगर 40-60 वर्ष आयु वर्ग में तथा 8 प्रतिशत कारीगर 60-75 वर्ष आयु वर्ग में आते हैं।

शैक्षणिक आधार पर विकास खण्ड काकोरी में 37 प्रतिशत कारीगर अशिक्षित हैं, 30 प्रतिशत कारीगरों ने प्राइमरी तक की शिक्षा ली है, 18 प्रतिशत कारीगरों ने जूनियर हाईस्कूल से हाईस्कूल तक की शिक्षा ली है, जबकि 12.5 प्रतिशत कारीगरों ने इण्टरमीडिएट तक की शिक्षा ली है तथा मात्र 5 प्रतिशत कारीगर स्नातक हैं।

विकास खण्ड काकोरी अधिक विकसित है, फिर भी इस विकास खण्ड के कारीगरों को भी योजनाओं का सम्पूर्ण लाभ नहीं मिल पा रहा है।

भौगोलिक स्थिति:-

जनपद लखनऊ के 4 तहसीलें हैं। विकास खण्ड काकोरी तहसील सदर के अन्तर्गत आता है। काकोरी जनपद लखनऊ के पश्चिमी क्षेत्र में आता है। भौगोलिक क्षेत्रफल 191.72 वर्ग किमी है, जो लखनऊ जनपद के ग्रामीण क्षेत्रफल का मात्र 9.21 प्रतिशत है। काकोरी की सीमा के अन्तर्गत एक मात्र गोमती नदी है जो मुख्यतः बरसात के मौसम में ही प्रवाहित होती है।

जहां चिकन कारीगरों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति काफी दयनीय है वही शिक्षा का स्तर व स्वास्थ्य दशाएं भी निम्न हैं। लेकिन कारीगरों हेतु स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं की व्यवस्था नहीं है। चूँकि ये कारीगर असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की श्रेणी में आते हैं, अतः इनके लिए वेतन अवकाश की कोई व्यवस्था नहीं है। चूँकि इन कारीगरों को मध्यस्थों के माध्यम से कार्य मिलता है जिस कारण इन्हें उचित मज़दूरी भी नहीं मिल पाती है। साथ ही विकास खण्ड में संस्थागत कल्याणकारी योजनाओं का सम्पूर्ण लाभलाभार्थियों को नहीं मिल रहा है। इन योजनाओं की जटिलता के कारण भी जनता तक इन का लाभ नहीं पहुंच पा रहा है।

चिकनकारी की तकनीक व प्रकार:

चिकनकारी में सूई-धागे के अतिरिक्त यदि कुछ और प्रयोग होता है तो वह है-आँखों की रोशनी और एक उच्चस्तरीय कलात्मकता का बोध। सूई-धागों से जन्मे टांकों व जालियों का एक विस्तृत, जटिल किन्तु मोहक संसार है। तरह-तरह के टांकों व जालियों के अलग-अलग नाम हैं। उनकी रचना का एक विशिष्ट विधान है और उनकी निजी विशिष्टता हैं। यदि कोई ब्रश व रंगों का काम कच्चे सूत के धागों से लिया जा रहा हो और कैनवास की जगह महीन कपड़ा होतो ऐसी चित्रकारी अनूठी ही कही जायेगी। मुर्रे, बखिया, जाली, तपची, फन्दा आदि 36 प्रकार के चिकन की

शैलियां होती हैं। इसके माहिर एवम् प्रसिद्ध कारीगरों में उस्ताद फ़याज़ ख़ाँ और हसन मिर्ज़ा साहिब थे।

इन सभी जालियों से चिकनकारी के कपड़ों में फल व फूल बनाये जाते हैं और अलग-अलग प्रकार से उनमें कढ़ाई की जाती है। चिकन कढ़ाई में समय के साथ कई तरह के और रूप उभरे हैं। हर डिज़ाइन और पैटर्न को उसकी मूल शैली में बनाए रखने के लिए अलग-अलग तकनीकों का इस्तेमाल होता है। इनमें से कुछ पुरानी शैलियाँ आज भी लोकप्रिय हैं जैसे जाली, मुरी, मक्खी, सितारखानी और फन्दा। ऐसा लगता है कि नई पीढ़ी ने भी कई नयी डिज़ाइनों को जन्म दिया होगा।

चिकनकारी में उत्पाद बाज़ार में बिक्री हेतु भेजे जाने से पूर्व निम्न प्रक्रियाओं से हो कर गुज़रता है—

चिकन के वस्त्र बनाने की प्रक्रिया

चिकन के वस्त्र बनाने की प्रक्रिया (महिलाओं व पुरुषों के लिए)
कपड़ा
सिलाई
प्रिन्टिंग
कढ़ाई
जालीवर्क
सिलाई
धुलाई
प्रेसिंग (इस्तेरी)
बिक्री हेतु पूर्ण उत्पाद

चिकनकारी के उत्पादन-विशेषज्ञ:

चिकन उद्योग के हर चरण में कुछ विशेषज्ञ होते हैं जो चिकन उद्योग को ख़बसूरती व विशिष्टता प्रदान करते हैं तथा चिकनकारी का आधार है।

ठप्पा कार प्रिन्टिंग बनाने वाला—यह वर्ग चिकन उत्पादन की प्रक्रिया से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित नहीं है, क्योंकि इन का महाजन से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। परन्तु ये मुद्रक से सौदा करते हैं। मुद्रक इनके पास ब्लॉक ख़रीदने आते हैं। ठप्पाकार एक मात्र ऐसा स्वतंत्र कारीगर है जो पूँजीपति के लिए कार्य नहीं करते हैं तथा उत्पादन प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं। ब्लॉक (ठप्पा) साल तथा शीशम (वानस्पतिक नाम डलबर्जिया सिरसों) की लकड़ी से बनायेजातेहैं। ठप्पाकार द्वारा ठप्पों को माप के अनुसार काटा जाता है। तत्पश्चात इसे पेन्ट किया जाता है व इसके बाद छेनी व हथौड़ी की मदद से इसमें नक्काशी की जाती है। ठप्पाकारों ने अपने मस्कि से ही डिज़ाइन (आलेख) बनाते हैं। इनका कढ़ाई करने वालों से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। ये मुद्रक के साथ सौदा करते हैं जोकि इनके ब्लॉक ख़रीदने आते हैं। चिकनकारी के आलेखों (डिज़ाइन) की प्रकृति

में परिवर्तन के कारण अब पुराने ब्लॉक का प्रयोग बहुत कम होता है क्योंकि इनब्लॉकों द्वारा प्रिन्टिंग करने पर स्याही बाहर फैल जाती है।

मुद्रक (प्रिन्टर)—चिकन उद्योग में उत्पादन प्रक्रिया की सब से तीव्र क्रिया मुद्रक (प्रिन्टिंग) है। ब्लॉक में बने आलेखों का वस्त्र पर प्रिन्ट किया जाता है। लखनऊ के अधिकांश मुद्रक चौक बाज़ार के ही दुकानों के बाहर स कार्य को करते हैं। इस कार्य हेतु किसी भी तरह की पूर्व तैयारी अथवा समाप्ति की अवस्था में अतिरिक्तकार्य की आवश्यकता नहीं होती है।

कपड़े पर जो डिज़ाइन (आलेख) मुद्रित किया जाता है वह कपड़े के आधार पर आलेख का मुद्रण करते हैं। नये व अनुभवहीन मुद्रक को तुलनात्मक रूप से थोड़ा कम मूल्य मिलता है।

यदि कारीगर अपने नमूने की छपाई हेतु मुद्रक के पास आते हैं तोउनसेव्यापारियों की तुलनामेंप्रति पद अधिकमूल्य लियाजाताहै।क्योंकि व्यापारी वर्ग एक बड़ी संख्या में छपाई करवाते हैं। प्रिन्टर द्वारा एक अथवा कई तरह के लकड़ी के ठप्पों का प्रयोग किया जाता है। छपाई हेतु दो तरह के रंगों नीले (नील) व गुलाबी रंग का प्रयोग किया जाता है। इन रंगों को एक चौड़े बर्तन में पानी में मिलाकर घोल बनाया जाता है। उसके ऊपरी गर्म कम्बल का टुकड़ा बिछा कर सूती कपड़े से ढक दिया जाता है ताकि रंग के घोल में ब्लॉक को डुबो कर कपड़े के ऊपर दबाया जाता है। जिस से कि ठप्पे (ब्लॉक) का आलेख (डिज़ाइन) कपड़े पर छप जाये। नील का प्रयोग गुलाबी रंग की तुलना में अधिक किया जाता है। क्योंकि यह कच्चा रंग होता है व इसकी धुलाई में अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती है।

चिकनकारी के जो पुरानी समय के कुशलकारीगर हैं वो गुलाबीरंग से ही प्रिन्ट करवाना पसन्द करते हैं। क्योंकि गुलाबी रंग काटन के वस्त्र पर अच्छी तरह साफ़ छपाई देता है। जिस से आलेख की बारीकी समझ में आ जाती है। महाजन या कारीगर के आदेश पर उनकी इच्छा के अनुरूप डिज़ाइन छाप दिये जाते हैं। किन्तु अत्यधिक बारीक आलेख के मुद्रण को अधिमान नहीं दिया जाता है, क्योंकि इस में रंग फैलने की सम्भावना रहती है।

कारीगर (मउइतवपकमतमत): कारीगर चिकन उद्योग का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। इसके बिना उद्योग की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इस कला को सामान्यतः 'यह कारीगर घर'—परिवार के व्यक्तियों के सहयोग से ही सीखते हैं तथा यह एक ऐसी कला है जिसका ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होता रहता है।

धोबी— धोबी कपड़े धुलते हुए आसानी से दिखायी देते हैं क्योंकि धाबी वर्ग कई पीढ़ियों से इस कार्य को पारिवारिक व्यवसाय के रूप में करते हैं।

कुछ काशीदकारी द्वारा स्वयं भी धुलाई का कार्य कर लिया जाता है, परन्तु कुछ वस्त्रों की धुलाई हेतु धोबी की आवश्यकता होती है। गुलाबी रंग से मुद्रित कॉटन के वस्त्र की धुलाई आज भी धोबीवर्ग की आजीविका का साधन है। सूत के वस्त्र को एक घोलजिसे 'मसाला' कहा जाता है, में कुछ घण्टों के लिए भिगो दिया जाता है। तपश्चात् इसे मिट्टी के बर्तन में पानी भरकर एक अल्प समय (10 से 15 मिनट) के लिए भट्ठी में डाला जाता है। फिर इसे नदी के तटों पर धुलाई हेतु ले जाया जाता है। नदी के किनारी बड़े-बड़े पत्थर होते हैं जिन्हें धोबी कपड़े धुलने हेतु आधार के रूप प्रयोग करते हैं। धुलाई के पश्चात वस्त्रों को सूखने के लिए प्लास्टिक के बड़े-बड़े फ्रेमों डाल दिया जाता है।

इन का कार्यप्रातः 6 बजे से शुरू होकर शाम 3-4 बजे तक चलता रहता है। गर्मियों में इन्हें अधिक कार्य मिलता है। इस समय एक धोबी एक दिन में 100 से 125 कपड़े धो लेता है। सामान्यतः कपड़ा 4-5 दिनों में धोबी द्वारा धुलकर इस्तरी करके महाजन को लौटा दिया जाता है। धुलाई के पश्चात धोबी वस्त्रों पर इस्तरी करता है व इस कार्य हेतु कोयले की भारी इस्तरी का प्रयोग किया जाता है।

1. **मध्यस्थ (दलाल)**—यह चिकन उद्योग का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है। क्योंकि उत्पादन प्रक्रिया से किसी प्रकार का कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होने के बावजूद यह चिकनकार व दुकानदार के मध्य कड़ी या पुल (इतपकहम) का कार्य करता है और इसीलिए इसे मध्यस्थ या बिचौलिया कहा जाता है।
2. **व्यापारी एवम् दुकानदार**— व्यापारी की उत्पादन प्रक्रिया में कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं दिखायी देती है। परन्तु यह वर्ग अप्रत्यक्ष रूप से इस उद्योग को आधार प्रदान कर रहा है। क्योंकि तैयार माल तब तक पूँजी सृजन नहीं कर सकता है जब तक कि वह अपने मूल्य (लागत + लाभ) को प्राप्त न कर लें।

व्यापारी वर्ग उत्पादित माल को बाजार प्रदान करता है और इसी कारण आज चिकन उद्योग जीवित है। चिकन उत्पादों की दो तरह की दुकानें शहर के भीतर देखने को मिलती हैं—

- क. थोकबिक्री (होल-सेल)
- ख. फुटकरबिक्री (रिटेल-सेल)

जिनमें से फुट कर बिक्री की दुकानें शहर के सभी हिस्सों में आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। कुछ व्यवसायी परिवार इस कार्य में विगत 1000 से भी अधिक वर्षों से लगे हुए हैं। एवम् कुछ यह कार्य कर रहे हैं। चिकन का व्यवसाय एक पारिवारिक व्यवसाय बन गया है।

चिकन कारीगर: असंगठित क्षेत्र के उद्यमी के रूप में—

अनौपचारिक या असंगठित क्षेत्र की अवधारणा सत्रप्रथम 1972 में केन्या रोजगार मिशन के परिपेक्ष्य में (स्व-

च्छक्व) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन—संयुक्तराष्ट्र विकास कार्यक्रम के दस्तावेज में प्रस्तुत की गयी थी। तत्पश्चात अनौपचारिक क्षेत्र के सम्प्रत्यय की अवधारणा का प्रयोग के थहार्ट (ज्ञमपजी भ्तज)1973 ने घाना में स्वनियोजित क्षेत्र में लगे लोगों की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए किया था।

असंगठित क्षेत्र की अवधारणा को स्पष्ट कारने हेतु यह बात भी स्पष्ट हो जानी चाहिए कि संगठित व असंगठित क्षेत्र के पर्यायवाची के रूप में भारत में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ द्वारा आपैपचारिक व अनौपचारिक क्षेत्र को प्रयुक्त किया जाता है। केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (बेण्ण) "असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्र की परिभाषामें ऐसे उद्यमों को शामिल करता है जिनमें यदि पावर का प्रयोग न किया जाता होतो 20 से अधिक कर्मचारी काम ने करते हों और यदि पावर का प्रयोग हो रहा हो तो 10 कर्मचारियों से अधिक कर्मचारी काम न करते हों इन उद्यमों में काम करने वाले श्रमिक किसी कानून के अधीन जैसे—औद्योगिक विवाद कानून (1948) पंजीकृत नहीं होते। राष्ट्रीय लेखा प्रणाली के अनुसार परिणामतः अनौपचारिक क्षेत्र में शामिल किया जाता है।"

चिकनकारी में लगे उद्यमी भी चूंकि इस कार्य को परिवार में ही परिवार के सदस्यों की सहायता से सम्पदित करते हैं। चिकनकारी को स्वरोजगार की श्रेणी में रखा जाता है। क्योंकि ये उद्यमी स्वेच्छा से व अपनी सुविधा के अनुसार इस कार्य को अपने घर पर अन्य कार्यों के साथ आजीविका के स्रोत के रूप में इस कार्य को कर रही है।

निष्कर्ष

किसी जमानें में अवध की शान रही चिकनकारी आज अपने वजूद के लिए बाजार का मुंह ताकती है। बेशकीमती कढ़ाई मूल्यों की प्रतियोगिता के आगे अपनी कीमत के आधार पर कम कीमती होने को हर दिन तैयार हो जाती है। बढ़ते व्यवसायीकरण चिकनकारी के स्तर पर कम दामों पर कम कुशल महिलाओं के काम के शोषण और सस्ते मशीनी चिकन की बढ़ती मांग से चिकनकारी के स्तर को कलाकारी से नीचे धकेल कर कम लागत के सामान पर लाकर पटक दिया। ऐसा नहीं है कि आज बारीक या अच्छा काम नहीं हो रहा है लेकिन ये भी सच्चाई है कि ज्यादातर काम चालू ही है और

चिकनकारीगरी के बीच अब एक कलाकारी नहीं मजबूरी बन कर रह गयी है। आज न केवल उत्तर प्रदेश बल्कि पूरे देश की इस बेशकीमती कला को बाजार की मार से बचाने की ज़रूरत है। जिके लिए ज़रूरी है कि कारीगरों को अच्छी-से-अच्छी ट्रेनिंग मुहैया कराई जाए। हाथ से बनने चिकन को जगह जगह हस्तशिल्प प्रदर्शनियां लगाकर बढ़ावा दिए जायें। चिकन के उत्पादों के लिए खास बाजार तैयार हों। चिकन को निर्यात किए जाने वाले देशों में चिकन के बेहतरीन काम का विभिन्न माध्यमों से प्रचार-प्रसार हो।

चिकनकारी उद्योग को संगठित करने का प्रयास हो, और सब से महत्वपूर्ण चिकनकारी करने वाली महिलाओं को न केवल

पहचान मिले बल्कि उनके काम को खाली वक्त के दायरे से बाहर निकाल कर उनकी रचनात्मकता को फलने-फूलने के अवसर व मेहनत के उचित दाम मिले।

पिछले पाँच दशकों में चिकनकारी की गुणवत्ता में काफी गिरावट आई है। जिसकी वजह से चिकनकारी के संसार में बाज़ार की गहरी सेंधमारी है। बाज़ार के सीधे हस्तक्षेप ने इस दौरान चिकन को कला के दायरे से खींच कर मुनाफ़ाखोरी की चौहद्दी पर लाकर पटक दिया है। जहाँ कला कलाकार से रूठी ही नहीं खुद से भी मुंह फुलाकर बैठ गई है। तारों से लेकर कपड़ा तक बाज़ार की इस राजनीति से बेज़ार है।

इसके उत्थान हेतु यह आवश्यक है कि इनके लिए श्रम कल्याण कार्यक्रमों के माध्यम से इन्हें सामाजिक एवं आर्थिक रूप से उन्नत किया जाये। ऐसा करने से कारीगरों के भीतर असुरक्षा एवं असन्तोष कभी पैदा नहीं होगी, तथा ये कारीगर अपने व्यवसाय से सम्बन्धित कार्य को पूरे मनोयोग से करेंगे।

चिकनकारीगरों के उत्थान हेतु यदि सरकार इनके लिए कोई सरकारी विभाग का गठन कर दे तो इनकी सारी समस्याएं एवं

असुरक्षित भविष्य का डर समाप्त हो जायेगा तथा यह उद्योग कई सारे बेरोज़गारों को रोज़गार देने में सफल होगा।

सन्दर्भ

- मिर्ज़ा जाफ़र हुसैन एकदीम लखनऊ की आखिरी बहार एकौमी कौन्सिल बराए फ़रोग उर्दू ज़बान पेज संख्या 375 से 379 तक
- अल्वी अहमद इब्राहीम, 'यथार्थ के दर्पण में काकोरी' एउत्तर प्रदेश पेज संख्या 96
- अरशी, अंजुमा (2008)। उत्तर प्रदेश में मुस्लिम कारीगरों की सामाजिकआर्थिक स्थिति- शोधग्रंथ शोधगंगा।
- अवस्थी, सीमा। (2016)। जनपद लखनऊ के चिकन कारीगरों के कार्य एवं जीवनयापन की दशा पर संस्थागत हस्तक्षेप के प्रभावों का मूल्यांकन। शोधग्रंथ शोधगंगा।
- शिखा, चंटिया। भारत से चिकन उत्पादों के निर्यात पर बदलते फैशन का प्रभाव। शोधग्रंथ शोधगंगा



भारत के पारंपरिक लोक चित्रों का आधार ग्रामीण जनजीवन

डॉ.सरिता पाण्डेय

सहायक प्राध्यापिका एकलव्य विश्वविद्यालय दमोह, मध्य प्रदेश

सारांश

लोक चित्रों में चित्र किसी एक व्यक्ति की भावनाओं पर नहीं बल्कि समस्त समाज की भावनाओं से प्रेरित होकर बनाये जाते हैं। लोक कलाकार सदैव अपने समाज परम्परा के वातावरण में रहकर चित्रों का निर्माण करता है जहाँ उसका कोई प्रतिद्वन्दी नहीं होता। प्रत्येक समाज में आवश्यकता अनुसार परम्पराओं में जो बदलाव आते हैं उन्हें भी परम्पराओं के साथ लोक कला में सुधार कर दिये जाते हैं। लोक कला व्यक्ति के विकास का माध्यम है। लोक कला निरन्तर नवीन सृजन एवं विकास कि एक उचित प्रक्रिया है। लोक संस्कृति मनुष्य के जीवन के संस्कार है। जो वह अपने साथ लेकर जीवन के सफर में आगे बढ़ता है। यह संस्कृति गाँवों, शहरों में समान रूप से विद्यमान है। यह व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास का आधार है। लोक कला के द्वारा व्यक्ति अपने संस्कारों, प्रेम, करुणा के भावों, क्षमा, अहिंसा के विचारों को अपने व्यक्तित्व में लाने का प्रयास करता है।

लोक कला मानव के जीवन में ई वर पर वि वास करने की प्रेरणा देती है। लोक कला मंगल भावों से ओत-प्रोत यह कलाकार की तुलिका में भरे रंगों से चित्रों को ऐसे स्वरूप को प्रदान करती है, मानों स्वयं ई वर का आशीर्वाद हो। इसे देखने वाले दर्शकों को ये कला हृदय की गहराई तक छू जाती है। जीवन में सर्वश्रेष्ठ को प्राप्त करने और उसका उपयोग करने की प्रवृत्ति केवल मानव के स्वभाव में है। हम सभी ऐसी परिस्थितियों में उत्पन्न नहीं होते जहाँ आरम्भ से अंत तक केवल सुख ही मिले इसलिये हमें दुख में अभाव में विपरित परिस्थिति में कैसे एक सर्वश्रेष्ठ मानव बनना है, ये हम लोक कलाकारों से सीख सकते हैं। इस प्रकार लोक कला मानसिक विकास, सामाजिक विकास, आध्यात्मिक विकास के लिये हमेशा से प्रेरणा की श्रोत बनी।

मुख्य शब्दावली : ग्रामीण जनजीवन, परम्परा, संस्कृति, लोककला, अध्यात्म।

परिचय

चित्रकला परम्परा का इतिहास मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है। यह परम्परा आज की नहीं है बल्कि हमारे पूर्वजों से यह हमें विरासत स्वरूप प्राप्त हुयी है। वह समय जब मनुष्य ने प्रकृति की गोद में आँख खोली उस समय से ही उसने अपने मन के भावों को व्यक्त करने के लिये चित्रों को आधार बनाया। इस समय के मानव के पास कोई संसाधन नहीं था। प्रकृति द्वारा कभी उसे कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था तो कभी प्रकृति उसे आनन्दमयी परिस्थितियाँ प्रदान करती थी। इन परिस्थितियों को अपने मनोरंजन के लिये, तो कभी आखेट के लिये, कभी एक दूसरे के भावों को जानने के लिये, कभी एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने के लिए वह चित्रों का सहारा लिया करता था। यह उनके द्वारा बनाये गये गुफा चित्रों में देखा जा सकता है, जिनमें टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं द्वारा कई चित्र, बनाये गये हैं जो उस समय की मानव सभ्यता के प्रमाण हैं। आज भी पूरे विश्व में इन चित्रों के 6 केन्द्र स्थित हैं जिनमें से एक केन्द्र भारत है।

यद्यपि संसार में प्राचीन चित्रकला के नमूने हमें लगभग 30 हजार वर्ष पूर्व के मिलते हैं किन्तु जिन भारतीय शैल चित्रों के दर्पण में हम प्रागैतिहासिक मानव की गतिविधियाँ निहारेंगे वे वर्तमान जानकारी के अनुसार लगभग 10 हजार वर्षों से अधिक प्राचीनता वाले नहीं हैं। इस प्रकार वर्तमान संदर्भ में प्रागैतिहासिक मानव से तात्पर्य मध्य पाषाण कालीन संस्कृति के उस संवाहक से है जो भारत में 10 हजार से 5 हजार वर्ष पूर्व आखेटक और भोजन संग्राहक की वृत्ति से आजीविका चलाता था। यहीं से चित्रों की परम्परा ने जन्म लिया मानव के जीवन में इसी प्रकार किसी भी देश की अपनी एक परम्परा संस्कृति हमेशा से चली आयी है जो कहीं ना कहीं उस देश के इतिहास का आधार होती है। इतिहास को अगर देखा जाये तो वह परम्परा जितना प्राचीन नहीं हो सकता। परम्परा अपने अन्दर कई हजारों वर्षों से चली आ रही संस्कार, रीति-रिवाज को संजोये हुये इन संस्कारों को परम्परा द्वारा ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी तक पहुँचाया जाता है। पाश्चात्य देशों की भाँति भारत की परम्परा संस्कृति को जानने के लिये इतिहास लेखन की परिपाटी नहीं थी, फिर भी उस समय के ग्रन्थों रामायण, महाभारत में यह स्पष्ट है कि वैदिक काल से हमारे देश में धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा का विशेष स्थान है।

इस पर लिखा गया इतिहास का स्वरूप बड़ा विशाल होगा, यहाँ के ऋषि मुनियों के विषय में हमें कुछ भी प्राप्त जानकारी नहीं है, क्योंकि उनके द्वारा स्वयं के बारे में कुछ भी नहीं लिखा गया ना ही उन्होंने दूसरों से लिखवाया फिर भी उनके द्वारा जो संस्कार दिये गये उसका प्रभाव निरन्तर समाज पर बना रहा, यही कारण है कि इतिहास से प्राचीन परम्परा है।

ग्रामीण जनजीवन पर आधारित परम्परा, संस्कृति ही मनुष्य जीवन का आधार है। यह निरन्तर उसके साथ एक समाज के रूप में चलती है और संस्कृति के रूप में जन्म लेती है। संस्कृति का एक अंग कला भी है। प्रत्येक कला में अनुकृति के सर्जन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों में परम्परागत तत्व अवश्य होते हैं, किसी भी स्थान की कला को समझने के लिये पहले उस स्थान की संस्कृति एवं परम्परा को समझा जाये तो हमें कलाकार द्वारा बनाई गई कलाकृति को समझने में सरलता होगी, जैसे भारतीय चित्रकला का नाम आते ही इसमें धार्मिक, आध्यात्मिक परम्परा का आभास हो जाता है, चाहे वह प्राचीन कला हो या वर्तमान समय की कला सदैव ही इसने भारतीय संस्कृति को संजोये रखा है, फिर भी समय के परिवर्तन के साथ कुछ परिवर्तन कलाकारों में भी आते हैं, जिसका प्रभाव उनकी कला पर भी अवश्य पड़ता है। अगर हम भारतीय चित्र परम्पराओं का अध्ययन करते हैं तो अंजता के भित्ति चित्रों पर ध्यान ना जाये ऐसा सम्भव नहीं है। अंजता के चित्रों का निर्माण बौद्ध अनुयायीयों के द्वारा उनकी विष्णु जी एवं बुद्ध के प्रति उनकी आस्था के प्रतीक हैं, जिनको आज भी देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय के मानव की कलात्मक सोच का कोई अन्त ना था। ये चित्र इतने सजीव हैं कि हमें इनको देखकर गर्व होता है कि यह भारत की चित्र परम्परा की एक धरोहर है। इस समय पर चित्र को भित्तियों पर बनाया जाता था, यहीं से भित्ति चित्रों का प्रारम्भिक समय माना जा सकता है।

यही प्रारम्भ हमारे मानवीय जीवन में लोक चित्रों में दिखाई देने लगा। जब मनुष्य सभ्यता संस्कारों में जीवन यापन करने की कला सीख रहा था। उसी समय में उसके द्वारा लोक चित्र के प्रति रुचि ने जन्म लिया और वह त्यौहारों, उत्सवों में चित्रों के द्वारा अपने भाव प्रकट करने लगा। इस तरह यह क्रम सम्पूर्ण भारत के लोक चित्रों में भी देखा जा सकता है।

आज चित्रकला में भी कुछ परिवर्तन अवश्य ही परिलक्षित होते हैं। दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुओं को चित्रकला के प्रयोग

में लाया जाने लगा है, लेकिन नवीन प्रयोगों को प्राचीन परंपरा से जोड़कर ही नवीन स्वरूप दिया जा रहा है। कलाओं की परंपरा का दूसरा आवश्यक तत्व व्यंजना की पद्धति है, जिसमें लगातार परिवर्तन आते गए हैं और जिसमें मनुष्य की भावगत क्रियाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। आज कविता में शब्द चमत्कार की नवीन परंपरा और भाव की व्यंजना के भी नवीन रूप घटनाक्रम में पाए जाते हैं। कलाकार इनकी अपनी अभिव्यक्ति का आधार बनता है।

चित्रकला में विषय के अधीन आकृतियों को रंग रेखा एवं प्रकाश के माध्यम से नवीन तकनीक की परंपरा में प्रस्तुत किया जा रहा है। यह मानना ही पड़ेगा कि परंपरागत तत्व सदैव ही प्रचलित रहे हैं और उनके स्वरूप में परिस्थितियों के परिवर्तन के अधीन, परिवर्तन भी आते हैं, लेकिन उन्हें प्रस्तुत करने की पद्धतियां परंपरागत तत्वों से कभी अलग नहीं हो सकती है। परंपरा की परीलक्षणा का तीसरा तत्व संस्कृति का स्वरूप माना गया है। देश की संस्कृति देश की समृद्धि और उन्नति पर ही आधारित रहती है जो समाज को कला का स्वरूप प्रदान करती है। सांस्कृतिक मूल्य ही परंपरा बनाते हैं। जो जीवन और कला को समान रूप से प्रभावित किया करते हैं और जिनके द्वारा किसी भी समाज के उत्थान और पतन का अध्ययन सरलता से किया जा सकता है। अनेक अवसरों पर यूनानी कला परंपरा के अधीन नवीन तकनीक एवं शैलियों को विकसित होने का अवसर मिला है।

भारतीय चित्रकला में धर्म और अध्यात्म के तत्व आज भी परंपरागत रूप में विद्यमान हैं जिसका श्रेय ग्रामीण जनजीवन को जाता है। चित्रण की सैद्धांतिकता के पीछे जो परंपरा मध्यकाल तक चली है उसमें अब शिथिलता आती दिखलाई दे रही है। सौंदर्य का आकर्षण संगीत का माधुर्य, नृत्य की लय और चित्रकला की अभिव्यक्ति मानव की सुंदर भावनाओं को सदैव अपनी और आकर्षित करती रहती है।

आज का कलाकार अपने बौद्धिक तर्क से कला को अति जटिल एवं सर्वसाधारण की समझ की सीमा से परे की वस्तु बनाने में संलग्न है किंतु दूसरी ओर लोक परंपरा अपने रचनात्मक पक्ष से नैसर्गिक अभिव्यक्ति का मार्ग खोज ही निकालती है, जो कि जीवन विस्मृत और आत्म सुख का एकमात्र साधन है, परन्तु इसका कला की उच्चतम असाधारण एवं असामान्य मान्यताओं से कोई भी संबंध नहीं है हर्ष और उल्लास से भर कर उन्हें अनेक चित्रों को जनजीवन में चित्रित

किया गया है, जो भीतर से लोगों के विवास और जनस्मृतियों के क्रमागत इतिहास को समेटे हुए हैं, एवं भाव व्यंजना की दृष्टि से जिनकी क्षमता कर पाना अति कठिन है। इनका संबंध मानव की भावनाओं से सीधा है जिन्हें वह परंपरागत रूढ़ियों के रूप में प्रचलित करना चाहता है क्योंकि मानव का यह स्वभाव है कि वह अपनी प्राचीन संस्कृति धर्म और कला को सदैव जीवित रखना चाहता है, जिसमें ग्रामीण जनजीवन हमें ही महत्वपूर्ण योगदान देता आया है।

ग्रामीण जनजीवन एवं लोक चित्र

लोक कला हमारे जीवन में उत्साह वृद्धि करने की एक प्रक्रिया के रूप में हमेशा हमारे साथ-साथ चलती रही है, परन्तु फिर भी हम लोक कला के अर्थ को समझने का प्रयास करेंगे। सर्वप्रथम हमें उसमें छिपे अर्थ को जानना चाहिये। लोक कला दो शब्दों से मिलकर बनी है। लोक+कला जैसा कि लोक का अर्थ संस्कृत में देखने वाला या दर्शक है, जिसे साधारण शब्दों में लोक दर्शन कहा गया है, लोक शब्द का प्रयोग एक जनसमूह के लिये किया जाता है, जो साधारण जीवन व्यतीत करते हैं तथा अपने जीवन यापन की वस्तुयें स्वयं एकत्रित करते हैं, ऐसे लोग उत्सव, त्यौहारों, पूजा-पाठ या दुःख के समय एक साथ मिलकर उसे जीते हैं। इसलिये इन्हें लोक कहा जाता है।

'लोक' शब्द का जन्म संस्कृत से हुआ माना जा सकता है। हिन्दूओं के मुख्य ग्रंथ गीता में भी लोक संग्रह तथा लोक शब्द का कई बार प्रयोग किया गया है, जो लोक शब्द की प्राचीनता दिखाता है।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।

लोकङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि ।।

वेदों में भी लोक शब्द की प्राचीनता के प्रमाण मिले हैं। ऋग्वेद में लोक शब्द का अनेक बार उपयोग हुआ है। वेदों में लोक का अर्थ जन्म शब्द के रूप में भी माना गया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' शब्द का प्रयोग उन लोगों के लिये किया है, जो सरल साधारण होते हैं। ये कठोर परिश्रमी स्वयं पर विश्वास रखने वाले होते हैं, और दूसरी ओर "डॉ कुंडा बिहारी दास" के अनुसार 'लोक' शब्द उन लोगों के लिये प्रयोग होना चाहिए जो अपनी पुरातन संस्कृति के साथ ही जीते हैं।

महर्षि पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' में लोक तथा 'सर्वलोक' शब्दों का प्रयोग कई स्थानों पर किया है, तथा प्रत्यय करने पर 'लौकिक' तथा 'सर्वलौकिक' शब्दों की उत्पत्ति की है। 'महर्षि व्यास' द्वारा रचित हिन्दुओं के प्रमुख ग्रंथ रामायण के पढ़ने से अज्ञान रूपी अंधकार सामान्य जनता या लोक की आंखों से ऐसे दूर हो जाता है, जैसे आँखों से अंजन। ज्ञान रूपी सलाई द्वारा साफ करने से आंखें साफ एवं स्वच्छ हो जाती हैं—

“अज्ञान तितिरान्धस्य, लोकस्य तु विचेष्टतः।

ज्ञानाजन शलाकाभि, नेत्रोमीलन कारकम्”।।

इस प्रकार हमने लोक शब्द का अर्थ जानने का प्रयास किया, जिससे हमें यह ज्ञात हुआ कि समय चाहे जो भी रहा हो लोक शब्द परिवर्तित नहीं हुआ है, यही हर समाज को पहचान देता है, क्योंकि लोक से ही मनुष्य अपनी मान्यताओं एवं परम्पराओं को संरक्षित कर सकता है। अब हमारे द्वारा लोक कला के दूसरे शब्द 'कला' का अर्थ जानने का प्रयास भी किया गया है जो इस प्रकार है—

भारत में पायी जाने वाली लोक कलायें आधुनिक समय में भी अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं। लोक कलायें हमेशा से ही अपने साथ कई कथायें लिये हुये चलती हैं, जिनमें प्राचीन समय से वर्तमान समय तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। यही कारण है की उन्हें परंपरागत कला भी कहा जाता है। परन्तु यह कहना भी गलत नहीं होगा की लोक कला पर शास्त्रीय कला का प्रभाव आने लगा है। हमें लोक कलाओं को संरक्षित रखने के प्रयत्न करना आवश्यक हो जाता है। क्योंकि यह कलायें हमें आदिवासी या केवल गाँव में ही अपनी वास्तविक रूप में मिलती है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हमेशा से ही लोक साहित्य की चर्चा हुई परन्तु किसी का भी ध्यान लोक कला की ओर नहीं गया। तब 1932 में जर्मनी के विद्वान 'कॉनरेड' ने लोक कला की ओर सबका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया। 18वीं सदी से ही विद्वानों का आकर्षण लोक साहित्य रहा परन्तु उस समय तक लोक कला का अस्तित्व नकारा गया।

19वीं सदी में विद्वानों ने लोक कथाओं में अपनी रुचि दिखाई, जिसमें 'जॉन रस्किन' प्रथम थे। उन्होंने इन लोक कथाओं को समाज के निर्माण में उपयोगी माना एवं उसे विद्वानों के द्वारा आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। परिणाम स्वरूप यूरोप में लोक कलाओं को राष्ट्रीय कला के रूप में अपनाया जाने लगा

तथा लोक कलाओं की प्रशंसा सम्पूर्ण राष्ट्र में कि जाने लगी। 1885 में जो भी शोध किये गये। उनमें यह प्रमाण मिलता है कि लोक कला का अध्ययन कार्य सर्वप्रथम 'एल.ओ.एस.रियल' द्वारा किया गया था। उन्होंने लोक कला परम्पराओं को व्यक्तिवादी सिद्धान्त से जुड़ा माना। उनके अनुसार लोक कला के जीवित होने का कारण ग्रामीण जनजीवन पर आधारित लोक चित्र परंपरा ही है।

निष्कर्ष

लोक कलाकार चित्रों को आकार देते समय इतने खो जाते हैं कि वे भूल जाते हैं उन्होंने कितना ज्यादा अलंकरण कर दिया है। ये कलायें हमेशा समूह में रहकर बनाने की जो परम्परा रही है, उससे लोगों की रुचि भी लोक कलाओं में बढ़ने लगी और वे अपने जीवन में इसका प्रयोग प्रत्येक क्षण करने लगे परन्तु हमारे समाज में आधुनिकता की चमक से उच्च वर्ग के लोग इसे केवल गाँव में कि जाने वाली कला या अनपढ़ लोगों की कला के रूप में ही स्थान देते हैं, परन्तु वह यह भूल रहे हैं कि मानव का अस्तित्व ही इन कलाओं के द्वारा सामने आया है। लोक कला कि यह विशेषता है, कि इसे कोई डर नहीं

होता है कि आर्थिक स्थिति जैसी भी हो वह इसके विकास में बाधा कभी नहीं बनेगी। प्राचीन काल से लेकर अभी तक भारतीय लोक चित्रकला अपना अस्तित्व बनाये हुये है। मेरा मानना है हमें बदलाव करने चाहिए परन्तु साथ में अपनी संस्कृति और परंपरा से भी जुड़ा रहना चाहिए। मेरे द्वारा यह आशा की जा रही है कि इस लघु शोधपत्र के द्वारा आगामी शोधार्थियों को लाभान्वित किया जा सकेगा।

संदर्भसूची:

1. वर्मा, महेंद्र, (2006), भारतीय चित्रकला की परंपरा, पृ.सं. -13।
2. श्रीवास्तव, ए.ल.,(1999), भारतीय कला प्रतीक, पृ.सं. -105।
3. श्रीवास्तव, ए. एल., भारतीय संस्कृति और शिल्प, पृ.सं.- 22, 24, 87)।
4. solosolution.net , उत्तराखंड में कला और संस्कृति।
5. प्रताप, रीता,(2020), भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ.सं.-3।
6. श्रीवास्तव, ए.एल.,(2001), भारतीय कला-संपदा, पृ.सं. -165।
7. सिंघानिया, नितिन, (2018), भारतीय कला और संस्कृति, पृ.सं.-2-27।



भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व का ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय

ग्रामीण प्रबंधन विभाग के प्रमुख, एमजीसीजीवी, चित्रकूट

सारांश

भारत में, प्राचीन और पूर्व-औपनिवेशिक काल में धार्मिक, नैतिक और समुदाय-उन्मुख मूल्यों का गहरा प्रभाव था, जिसमें राजा, व्यापारी और संघ सभी मिलकर सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने के लिए कार्य करते थे। यह विरासत भारत में आधुनिक कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) को प्रेरित करती है। औपनिवेशिक काल ने भारत में सीएसआर की नींव रखी, जहाँ टाटा, बिड़ला और गोदरेज जैसे उद्योगपतियों ने व्यावसायिक सफलता को सामाजिक कल्याण से जोड़ा। गांधी के ट्रस्टीशिप के दर्शन ने इस युग को प्रभावित किया, जिसमें नैतिक व्यावसायिक आचरण और सामाजिक भलाई के लिए धन के पुनर्वितरण पर जोर दिया गया।

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में सीएसआर की दिशा में संरचित प्रयास देखे गए, जिसमें उद्योगपतियों ने आर्थिक प्रगति को बढ़ावा दिया और महत्वपूर्ण सामाजिक पहलों को वित्तीय सहायता प्रदान की। सार्वजनिक-निजी भागीदारी सामाजिक चुनौतियों के समाधान में महत्वपूर्ण साबित हुई, और कंपनियों ने अपनी ब्रांड प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए सीएसआर का उपयोग करना शुरू कर दिया। कंपनी अधिनियम, 2013 ने सीएसआर को संस्थागत रूप दिया, जिसके तहत योग्य व्यवसायों को राष्ट्रीय विकास में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए बाध्य किया गया। सीएसआर अब एक रणनीतिक पहल में परिवर्तित हो गया है, जिसमें कंपनियाँ मापने योग्य प्रभावों और दीर्घकालिक लक्ष्यों पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं। तकनीकी प्रगति ने सीएसआर के दायरे और पहुँच को बढ़ाया है, जिससे सामाजिक चुनौतियों के लिए नवीन समाधान संभव हुए हैं। भारत में सीएसआर का भविष्य नवीन विचारों, सामूहिक कार्रवाई, और पर्यावरण संरक्षण के सामंजस्यपूर्ण एकीकरण पर निर्भर करता है, ताकि एक ऐसा वातावरण बनाया जा सके जहाँ प्रत्येक व्यक्ति समृद्ध हो सके, व्यवसाय प्रगति कर सके, और समुदाय आपसी समृद्धि और कल्याण के आधार पर फल-फूल सके।

परिचय

भारत में निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) का एक समृद्ध और विकसित इतिहास है, जो देश की गहरी सांस्कृतिक, नैतिक और सामाजिक-आर्थिक विरासत से जटिल रूप से जुड़ा हुआ है। भारत में सीएसआर की यात्रा वैदिक परंपराओं में निहित परोपकार के प्राचीन कार्यों से लेकर कानूनों और विनियमों द्वारा अनिवार्य समकालीन उपायों तक फैली हुई है। सदियों से, भारत में सीएसआर समाज के नैतिक दायित्व से विकसित होकर एक उच्च संरचित व्यावसायिक अभ्यास बन गया है, जिसे अब व्यावसायिक प्रदर्शन और सामाजिक परिणामों दोनों के द्वारा तेजी से मान्यता प्राप्त है। भारत में सीएसआर का ऐतिहासिक संदर्भ बहुआयामी है, जिसमें परंपरा और आधुनिकता, सामुदायिक कल्याण और व्यावसायिक स्थिरता के बीच परस्पर संबंध है, जो अंततः भारत के निगमित नागरिकता परिदृश्य को आकार देता है। इस प्रकार, भारत में सीएसआर प्रथाओं के ऐतिहासिक सातत्य का अनुसरण करके, व्यावसायिक समुदायों और पर्यावरण के साथ उनके संबंधों के बीच इस जटिल अन्योन्याश्रयता में गहन अंतर्दृष्टि प्राप्त की जा सकती है। सीएसआर की विरासत, एक तरह से, भारत के लिए आगे बढ़ने का एक प्रकाश है, क्योंकि यह न केवल उथल-पुथल भरी वैश्विक अर्थव्यवस्था से जूझ रहा है, बल्कि समाज के सामने पाई जाने वाली विविधता: जिम्मेदार निगमित आचरण, हितधारक जुड़ाव, और भारतीय सामाजिक-आर्थिक विकास के पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर सभी संस्थाओं को लाभ पहुंचाने के लिए सतत विकास।

प्राचीन और पूर्व-औपनिवेशिक काल: सामाजिक उत्तरदायित्व की नींव

क. धर्म में निहित परोपकार

भारत का प्राचीन और पूर्व-औपनिवेशिक इतिहास धर्म, नैतिकता और परोपकार के बीच गहरे संबंध को उजागर करता है। सामाजिक कल्याण एक नैतिक और आध्यात्मिक दायित्व था, जो सांस्कृतिक और धार्मिक मूल्यों में निहित था। धर्म और सेवा की अवधारणाएं इस समझ के केंद्र में थीं, जिसमें कर्तव्य समाज के प्रति एक व्यक्ति की जिम्मेदारी थी और सेवा को पुण्य माना जाता था। दान के लिए धार्मिक प्रोत्साहन, जिसे दान के रूप में जाना जाता है, को हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, इस्लाम और सिख धर्म द्वारा बढ़ावा दिया गया था, और इसे मंदिरों, मठों और धर्मार्थ गतिविधियों की ओर निर्देशित किया गया था। राजा और शासक अक्सर धार्मिक और नैतिक सिद्धांतों से प्रेरित होकर सामाजिक कल्याण में अग्रणी भूमिका निभाते थे। राजाओं और धनी व्यापारियों द्वारा वित्तपोषित प्रमुख परियोजनाओं में शैक्षिक अवसंरचना, स्वास्थ्य सुविधाएं, जल प्रबंधन और कला और संस्कृति के लिए सहायता शामिल थी। कल्याणकारी प्रयासों में अक्सर जाति या पंथ की परवाह किए बिना समाज के सभी वर्गों को लक्षित किया जाता था, जिसमें एकता और सामाजिक सद्भाव पर जोर दिया जाता था।

ख. गिल्ड और व्यापार संघ: सामूहिक जिम्मेदारी के अग्रदूत

प्राचीन भारत की आर्थिक संस्थाओं, जिनमें गिल्ड और व्यापार संघ शामिल हैं, ने सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गिल्ड, विशेष रूप से वैश्यों (व्यापारी वर्ग) के बीच, प्रभावशाली और सुव्यवस्थित थे, जो शुरुआती व्यावसायिक संघों के रूप में कार्य करते थे। उन्होंने नैतिक प्रथाओं और

आपसी सहयोग पर जोर दिया। गिल्ड ने बुनियादी ढांचे, सामुदायिक परियोजनाओं और धार्मिक संस्थानों को वित्तपोषित किया, निष्पक्ष व्यापार प्रथाओं को सुनिश्चित किया और दीर्घकालिक सामाजिक और आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा दिया। उन्होंने शासकों के साथ मिलकर कस्बों और शहरों के विकास में निवेश किया, जिससे समृद्धि और स्थिरता को बढ़ावा मिला। भारत में प्राचीन और औपनिवेशिक काल के दौरान सामाजिक जिम्मेदारी धार्मिक, नैतिक और समुदाय-उन्मुख मूल्यों में गहराई से निहित थी। राजाओं, व्यापारियों और संघों ने सामूहिक रूप से सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने के लिए काम किया, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, बुनियादी ढांचे और सांस्कृतिक संरक्षण पर ध्यान केंद्रित किया। धार्मिक कर्तव्य और आर्थिक गतिविधियों के साथ परोपकार के एकीकरण ने सामुदायिक विकास के लिए एक ठोस आधार तैयार किया, जिसने भारत में आधुनिक निगमित सामाजिक जिम्मेदारी को प्रेरित किया।

औपनिवेशिक अवधि: व्यापार में सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास

क. उद्योगपतियों और परोपकार का उदय

भारत में औपनिवेशिक अवधि के दौरान, प्रमुख व्यावसायिक परिवार, जैसे टाटा, बिरला, और गोद्रेज, ने उन्हें औद्योगिक विकास और सामाजिक कल्याण के साथ एकीकृत करके परोपकारी प्रयासों को फिर से परिभाषित किया। ये परिवार, जिन्होंने कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) की नींव स्थापित की, ने एक साथ स्थायी कारोबार का निर्माण करते हुए सामाजिक चुनौतियों को संबोधित करने का महत्व व्यक्त किया। उदाहरण के लिए, जमशेदजी टाटा ने बेंगलुरु में भारतीय विज्ञान संस्थान (आईआईएससी) जैसे संस्थानों की स्थापना करके औद्योगिक परोपकारी का नेतृत्व किया, जबकि जी.डी. बिरला ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के लिए वित्त पोषण सहित शैक्षिक और सांस्कृतिक पहल का समर्थन किया। गोद्रेज परिवार ने स्वास्थ्य देखभाल और स्वच्छता पर ध्यान केंद्रित किया, सस्ती उपभोक्ता उत्पादों को पेश किया और सार्वजनिक स्वास्थ्य पहल का समर्थन किया। इन पहलों ने एक दोहरी फोकस का प्रदर्शन किया: औद्योगिक प्रगति की प्रगति और शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और बुनियादी ढांचे के विकास के माध्यम से समाज में सुधार।

ख. गांधी के विजन का प्रभाव

महात्मा गांधी की सामाजिक जिम्मेदारी की दृष्टि औपनिवेशिक काल के दौरान औद्योगिकवादियों के दृष्टिकोण को काफी प्रभावित करती है। उन्होंने ट्रस्टीशिप की अवधारणा को पेश किया, उद्योगपतियों को धन के स्थायर के रूप में कार्य करना और असमानता को कम करने और सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए स्वैच्छिक पुनर्वितरण के लिए समर्थन देना। उन्होंने लाभ केंद्रित से लोगों के केंद्रित व्यावसायिक प्रथाओं में बदलाव को प्रोत्साहित किया। गांधी की प्रेरणा से कई औद्योगिकवादियों ने ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा

और स्वतंत्रता आंदोलन की दिशा में अपने संसाधनों का निर्देश दिया। गांधी के दर्शन ने उन स्थायी व्यवसायों के निर्माण पर जोर दिया जो बिना किसी लाभ पर सामाजिक और पर्यावरणीय जिम्मेदारी को प्राथमिकता देते थे। भारत में औपनिवेशिक अवधि के दौरान सीएसआर फोकस का विकास व्यापार में सामाजिक जिम्मेदारी की प्रकृति और प्राथमिकताओं में उल्लेखनीय बदलाव को चिह्नित करता है। व्यवसायों ने एक मजबूत, आत्मनिर्भर भारत की स्थापना की दिशा में अपने सीएसआर प्रयासों को फिर से उन्मुख किया, अकादमिक संस्थानों, स्वास्थ्य सुविधाओं और स्वतंत्रता संघर्ष का समर्थन करने की पहल पर ध्यान केंद्रित किया। सीएसआर को राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक विकास में योगदान करने की जिम्मेदारी के रूप में देखा जाना शुरू हुआ, एक समग्र दृष्टिकोण को अपनाया जो मानव और सामाजिक पूंजी में रणनीतिक निवेश के साथ सहयोग करता है। टाटा, बिरला और गोद्रेज जैसे उद्योगपतियों ने गांधी की विश्वास और सामाजिक कल्याण की अवधारणा से काफी प्रभावित किया। इसके अलावा, सीएसआर प्रयासों को शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय प्रगति पर ध्यान केंद्रित करते हुए स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ा गया। इन योगदानों ने सामाजिक रूप से जिम्मेदार व्यावसायिक प्रथाओं की स्थापना की जो भारत में आधुनिक सीएसआर पहल को प्रेरित करना जारी रखते हैं।

स्वतंत्रता के बाद का काल (1947-1980 का दशक): राष्ट्र निर्माण में सीएसआर का विकास

क. औद्योगीकरण के माध्यम से राष्ट्र निर्माण

स्वतंत्रता के बाद भारत के शुरुआती दशकों में, आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक-आर्थिक विकास को प्राप्त करने के लिए औद्योगीकरण पर ध्यान केंद्रित किया गया था। निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों ने राष्ट्र निर्माण के प्रयासों में योगदान दिया। भारत ने मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल को अपनाया, जिसमें राज्य के नेतृत्व वाले विकास को निजी उद्यम के साथ जोड़ा गया। सार्वजनिक क्षेत्र ने भारी उद्योगों और बुनियादी ढांचे पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि निजी क्षेत्र ने आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण में योगदान दिया। स्वतंत्रता-पूर्व परोपकार और सामाजिक जिम्मेदारी से प्रेरित उद्योगपतियों ने सामुदायिक कल्याण के साथ व्यवसाय विकास को एकीकृत किया। प्रमुख योगदानों में साक्षरता और तकनीकी शिक्षा में सुधार के लिए स्कूलों, कॉलेजों और छात्रवृत्तियों को वित्तपोषित करना, वंचित क्षेत्रों में अस्पताल और क्लीनिक स्थापित करना, ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि और कौशल विकास को बढ़ावा देना और निजी उद्योगों के माध्यम से रोजगार सृजित करना, स्थानीय आर्थिक विकास को बढ़ावा देना शामिल था।

ख. सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (पीएसयू) का उदय

भारत के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (पीएसयू) ने इस अवधि के दौरान आर्थिक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्हें लाभ कमाने से आगे बढ़कर सामुदायिक विकास परियोजनाओं, ग्रामीण बुनियादी

ढांचे और कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में सक्रिय रूप से योगदान देने का काम सौंपा गया था। इन पहलों ने सीधे तौर पर हाशिए पर पड़े समुदायों को लाभ पहुंचाया, समावेशिता को बढ़ावा दिया और क्षेत्रीय असमानताओं को कम किया। पीएसयू की सीएसआर पहलों ने सीधे तौर पर समाज के हाशिए पर पड़े और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को लाभ पहुंचाया, समावेशिता को बढ़ावा दिया और क्षेत्रीय असमानताओं को कम किया।

ग. सीएसआर की स्वैच्छिक प्रकृति

इस युग के दौरान, कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) काफी हद तक स्वैच्छिक थी, जो विनियामक आदेशों के बजाय नैतिक और सामाजिक प्रेरणाओं से प्रेरित थी। सीएसआर पहल गांधी के ट्रस्टीशिप के दर्शन से प्रेरित थी, जिसका उद्देश्य असमानताओं को कम करना और गरीबों का उत्थान करना था। कंपनियों को सीएसआर गतिविधियाँ करने के लिए कोई औपचारिक नियमन की आवश्यकता नहीं थी, और उन्होंने स्वेच्छा से अपने प्रयासों को शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ग्रामीण विकास जैसी राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के साथ जोड़ दिया। सीएसआर का व्यापक लक्ष्य एक आत्मनिर्भर राष्ट्र के विकास में योगदान देना था, जो नव स्वतंत्र भारत में सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का समाधान करता है।

आर्थिक उदारीकरण और सीएसआर विकास (1990-2000)

1990 के दशक के आर्थिक उदारीकरण ने भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) के लिए एक परिवर्तनकारी युग की शुरुआत की। इस अवधि में सीएसआर का विकास एक परोपकारी गतिविधि से व्यवसाय संचालन के एक अधिक रणनीतिक और अभिन्न अंग के रूप में हुआ, जो वैश्वीकरण, प्रतिस्पर्धा और सतत विकास के बारे में बढ़ती जागरूकता से प्रेरित था।

क. वैश्वीकरण और कॉर्पोरेट जवाबदेही

भारत में 1991 की उदारीकरण नीतियों ने कॉर्पोरेट व्यवहार और जिम्मेदारी के लिए नए मानक पेश किए, जिससे बहुराष्ट्रीय निगमों से प्रतिस्पर्धा बढ़ गई। इन प्रथाओं ने मानवाधिकारों, श्रम कानूनों और स्थिरता पर अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के पालन पर जोर दिया। वैश्विक मानकों द्वारा शुरू किए गए फोकस क्षेत्रों में सतत विकास, पर्यावरणीय जिम्मेदारी और नैतिक शासन शामिल थे। व्यवसायों ने पर्यावरण की दृष्टि से टिकाऊ प्रथाओं को प्राथमिकता दी, जैसे कार्बन फुटप्रिंट को कम करना, नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग करना और कुशल अपशिष्ट प्रबंधन। कॉर्पोरेट प्रशासन में पारदर्शिता और नैतिक प्रथाओं ने भारतीय व्यवसायों को वैश्विक अपेक्षाओं के साथ जोड़ा।

ख. सामाजिक उत्तरदायित्व रिपोर्टिंग का उदय

CSR व्यवसायों के लिए तेजी से महत्वपूर्ण हो गया है, जिससे सामाजिक योगदान के लिए अधिक संरचित और पारदर्शी दृष्टिकोण सामने आए हैं। वैश्विक प्रथाओं से प्रेरित भारतीय कंपनियों ने अपनी पहल और पर्यावरणीय प्रभावों का दस्तावेजीकरण करने के लिए स्थिरता रिपोर्ट प्रकाशित करना शुरू किया, जिससे हितधारकों को जवाबदेही और संचार प्रदान किया जा सके। CSR परोपकार से व्यवसाय संचालन के एक रणनीतिक घटक के रूप में विकसित हुआ है, जो सामाजिक उत्तरदायित्व को सामाजिक कल्याण और दीर्घकालिक लाभप्रदता में योगदान देने के लिए मुख्य उद्देश्यों के साथ संरेखित करता है।

ग. सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी)

इस युग में सामाजिक और विकासात्मक मुद्दों से निपटने के लिए निगमों, सरकारों और गैर सरकारी संगठनों के बीच सहयोगी मॉडल का उदय हुआ। ये मॉडल शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और कौशल विकास पर केंद्रित थे, जिसमें स्कूल, डिजिटल साक्षरता पहल, छात्रवृत्ति, टीकाकरण अभियान और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम शामिल थे। इन साझेदारियों का लाभ यह था कि उन्होंने विकासात्मक कार्यक्रमों के प्रभाव को अधिकतम किया, जिससे व्यवसायों को सरकारी नीतियों और रूपरेखाओं के साथ तालमेल बिठाते हुए स्थायी सामाजिक परिवर्तन पर ध्यान केंद्रित करने की अनुमति मिली।

घ. ब्रांड विभेदक के रूप में सीएसआर का उदय

निगमित सामाजिक दायित्व (सीएसआर) कॉर्पोरेट प्रतिष्ठा और उपभोक्ता निष्ठा को आकार देने में एक महत्वपूर्ण कारक बन गया है। कंपनियाँ इस बात को मानती हैं कि सीएसआर पहल उनकी सार्वजनिक छवि पर सकारात्मक प्रभाव डालती हैं, जिससे उपभोक्ताओं और निवेशकों का विश्वास बढ़ता है। जिम्मेदार व्यवसायों को अधिक नैतिक, विश्वसनीय और समुदाय-उन्मुख माना जाता है, जिससे उन्हें प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त होता है। व्यवसाय अब सीएसआर को ट्रिपल बॉटम लाइन ढांचे के साथ एकीकृत कर रहे हैं, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि उनकी गतिविधियाँ समाज को लाभान्वित करें, पर्यावरण की रक्षा करें और लाभप्रदता में वृद्धि करें। उदाहरणों में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और महिला सशक्तिकरण जैसे सामाजिक कारणों का समर्थन करना, नवीकरणीय ऊर्जा, अपशिष्ट प्रबंधन और जल संरक्षण में निवेश करना और ब्रांड निष्ठा और बाजार विभेदीकरण के लिए सीएसआर का लाभ उठाना शामिल है।

अनिवार्य सीएसआर युग (2013-वर्तमान)

कंपनी अधिनियम, 2013 का अधिनियमन भारत की सीएसआर यात्रा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुआ, जिससे यह दुनिया का पहला देश बन गया जिसने सामाजिक विकास में कॉर्पोरेट योगदान को कानूनी रूप से अनिवार्य कर दिया। इस युग में संरचित विनियमन शुरू किए गए, जवाबदेही बढ़ाई गई और कॉर्पोरेट प्रयासों को राष्ट्रीय विकास प्राथमिकताओं के साथ जोड़ा गया।

ए. कंपनी अधिनियम, 2013

कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 135 के तहत अनिवार्य सीएसआर एक आवश्यकता है, जिसके तहत पात्र कंपनियों को पिछले तीन वित्तीय वर्षों में अपने औसत शुद्ध लाभ का कम से कम 2% सीएसआर गतिविधियों के लिए आवंटित करना आवश्यक है। पात्रता मानदंडों में ₹500 करोड़ या उससे अधिक की शुद्ध संपत्ति, ₹1,000 करोड़ या उससे अधिक का कारोबार और ₹5 करोड़ या उससे अधिक का शुद्ध लाभ शामिल है। कानून सामाजिक और विकासात्मक लक्ष्यों के साथ संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, महिला सशक्तिकरण और पर्यावरणीय स्थिरता जैसे विशिष्ट सीएसआर व्यय क्षेत्रों को परिभाषित करता है।

बी. अनिवार्य सीएसआर का प्रभाव

जवाबदेही और पारदर्शिता बढ़ाने के लिए निगमित सामाजिक दायित्व (सीएसआर) खर्च का पुनर्गठन किया गया है। कंपनियों को अब अपनी वार्षिक रिपोर्ट में सीएसआर खर्च को रिपोर्ट करना अनिवार्य है, और किसी भी अप्रयुक्त निधि को विशिष्ट निधियों में स्थानांतरित किया जाना चाहिए या भविष्य के वर्षों के लिए आगे बढ़ाया जाना चाहिए। तदर्थ दान-आधारित गतिविधियों से सुनियोजित, मापनीय पहलों की ओर बदलाव ने सीएसआर प्रभावशीलता को बढ़ाया है। कंपनियाँ अब अपने व्यावसायिक मूल्यों और राष्ट्रीय विकास लक्ष्यों के साथ संरेखित दीर्घकालिक प्रभाव वाली परियोजनाओं पर ध्यान केंद्रित करती हैं। सीएसआर व्यय मुख्य रूप से उच्च सामाजिक आवश्यकता वाले क्षेत्रों जैसे ग्रामीण विकास, स्वच्छता और कौशल विकास और रोजगार सृजन पर केंद्रित रहा है।

सी. सीएसआर में प्रौद्योगिकी की भूमिका

डिजिटल शिक्षा, टेलीमेडिसिन और नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं जैसी नवीन सीएसआर पहलों को सक्षम करने में प्रौद्योगिकी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। कंपनियाँ वंचित समुदायों को ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म और स्मार्ट कक्षाएँ प्रदान करने, ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा की पहुँच में सुधार के लिए टेलीमेडिसिन कार्यक्रमों को निधि देने और ग्रामीण विद्युतीकरण को बढ़ावा देने के लिए सौर ऊर्जा प्रतिष्ठानों और ऊर्जा-कुशल प्रौद्योगिकियों में निवेश करने के लिए डिजिटल उपकरणों का उपयोग कर रही हैं।

डी. अनिवार्य सीएसआर युग में प्रमुख चुनौतियाँ

सीएसआर निधियाँ अक्सर शहरी या अर्ध-शहरी क्षेत्रों में केंद्रित होती हैं, जिससे दूरदराज के क्षेत्रों में सीमित संसाधन रह जाते हैं। सभी भौगोलिक क्षेत्रों में समान वितरण सुनिश्चित करना एक चुनौती बनी हुई है। सीएसआर कार्यक्रमों के सामाजिक प्रभाव का मापन जटिल है और इसके लिए मजबूत ढाँचों की आवश्यकता होती है। मानकीकृत मैट्रिक्स की कमी कार्यक्रम की सफलता के मूल्यांकन में बाधा डाल सकती है। कंपनियाँ अक्सर अपने सीएसआर लक्ष्यों के साथ संरेखित उपयुक्त परियोजनाओं की पहचान करने और कानूनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संघर्ष करती हैं, और धन का दुरुपयोग कानूनी और प्रतिष्ठा संबंधी मुद्दों को जन्म दे सकता है।

आधुनिक सीएसआर में रुझान

हाल के वर्षों में, कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) व्यवसायों और समाज दोनों के लिए मूल्य बनाते हुए उभरती वैश्विक चुनौतियों का समाधान करने के लिए विकसित हुआ है। निम्नलिखित रुझान इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि सीएसआर आधुनिक परिदृश्य के साथ कैसे तालमेल बिठा रहा है और व्यापक सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों के साथ इसका बढ़ता संरक्षण कैसे हो रहा है।

1. स्थिरता और ईएसजी (पर्यावरण, सामाजिक, शासन)

कंपनियाँ तेजी से हरित व्यावसायिक प्रथाओं को अपना रही हैं, जैसे कि नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश करना, कार्बन फुटप्रिंट को कम करना और जल संरक्षण को बढ़ावा देना। सीएसआर के तहत सामाजिक जिम्मेदारी में निष्पक्ष श्रम प्रथाओं को सुनिश्चित करना, विविधता और समावेश को बढ़ावा देना, मानवाधिकारों का समर्थन करना और हाशिए के समुदायों के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा तक पहुँच में सुधार करना शामिल है। नैतिक शासन और पारदर्शिता पर भी जोर दिया जा रहा है, जिसमें कंपनियाँ कॉर्पोरेट नैतिकता और नेतृत्व में विविधता के लिए मजबूत आंतरिक नीतियाँ स्थापित कर रही हैं। व्यवसाय अपने सीएसआर प्रयासों को संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) और जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते जैसे वैश्विक स्थिरता ढाँचों के साथ भी जोड़ रहे हैं। वे दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए कार्बन उत्सर्जन, जल उपयोग और अपशिष्ट उत्पादन जैसे मानक मीट्रिक का उपयोग करके अपने पर्यावरणीय प्रभाव को मापते हैं।

2. कॉर्पोरेट-एनजीओ सहयोग

आधुनिक कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) में अक्सर सामाजिक परियोजनाओं को प्रभावी ढंग से निष्पादित करने के लिए निगमों और एनजीओ के बीच भागीदारी शामिल होती है। एनजीओ सीएसआर पहलों में स्थानीय ज्ञान, नेटवर्क और विश्वसनीयता लाते हैं, जिससे बेहतर परिणाम और स्थिरता सुनिश्चित होती है। उदाहरणों में ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य सेवा और पर्यावरण संरक्षण के लिए संयुक्त उद्यम शामिल हैं। अधिक कंपनियाँ भी स्केलेबल परियोजनाओं का सह-निर्माण कर रही हैं, एनजीओ, सामुदायिक हितधारकों और सरकारी निकायों के साथ सहयोग में पहलों को डिजाइन कर रही हैं। यह प्रवृत्ति नवाचार और स्थिरता को बढ़ावा देती है, यह सुनिश्चित करती है कि सीएसआर प्रयास स्थायी प्रभाव पैदा करें और बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन में योगदान दें। उदाहरण के लिए, एक निगम एक एनजीओ के साथ वंचित बच्चों के लिए एक शैक्षिक कार्यक्रम का सह-विकास कर सकता है, जिससे लंबे समय में इसकी मापनीयता, प्रासंगिकता और स्थिरता सुनिश्चित हो सके।

3. कौशल विकास और महिला सशक्तिकरण

कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) परियोजनाएँ गति पकड़ रही हैं, विशेष रूप से युवा सशक्तिकरण के लिए, जिसमें निगम रोजगार क्षमता बढ़ाने

के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्रों, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म और प्रशिक्षुता कार्यक्रमों को वित्तपोषित कर रहे हैं। ये कार्यक्रम डिजिटल साक्षरता, डेटा विज्ञान और हरित प्रौद्योगिकी जैसे भविष्य के लिए तैयार कौशल पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जो युवाओं को तेजी से बदलते नौकरी बाजार के लिए तैयार करते हैं। कई सीएसआर कार्यक्रमों का उद्देश्य कौशल अंतर को कम करना और कार्यबल की गुणवत्ता में सुधार करना है, खासकर ग्रामीण या वंचित क्षेत्रों में। इसके अतिरिक्त, सीएसआर उद्यमिता, वित्तीय समावेशन, नेतृत्व प्रशिक्षण, माइक्रोफाइनेंस पहल और लिंग आधारित हिंसा और भेदभाव को कम करने के लिए जागरूकता अभियानों के माध्यम से महिला सशक्तिकरण पर ध्यान केंद्रित कर रहा है। ये परियोजनाएँ एसडीजी 5 (लैंगिक समानता) के अनुरूप हैं।

4. स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा पर ध्यान दें

कोविड-19 महामारी के दौरान, भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) परियोजनाएँ अस्थायी अस्पतालों, पीपीई और स्थानीय स्वास्थ्य सुविधाओं सहित स्वास्थ्य सेवा के बुनियादी ढाँचे के विकास की ओर बढ़ गई हैं। दूरदराज के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा तक पहुँच को आसान बनाने के लिए टेलीमेडिसिन सेवाएँ भी शुरू की गई हैं। दीर्घकालिक रणनीतियों में मातृ स्वास्थ्य, बाल देखभाल कार्यक्रम और मानसिक स्वास्थ्य सहायता शामिल हैं। शिक्षा में सीएसआर निवेश का उद्देश्य सरकारी स्कूलों के बुनियादी ढाँचे में सुधार करना, डिजिटल कक्षाएँ स्थापित करना और वंचित छात्रों को छात्रवृत्ति और संसाधन प्रदान करना है। कंपनियों ने अपने सीएसआर फोकस को डिजिटल शिक्षा तक बढ़ाया है, ग्रामीण छात्रों को इंटरनेट एक्सेस, डिवाइस और ऑनलाइन शिक्षण संसाधन प्रदान किए हैं। स्वच्छ विद्यालय अभियान जैसी पहल स्कूलों में भौतिक और शैक्षिक बुनियादी ढाँचे को बढ़ाने वाली कंपनियों के उदाहरण हैं।

शोध निष्कर्ष

- भारत में प्राचीन और पूर्व-औपनिवेशिक काल के दौरान सामाजिक उत्तरदायित्व धार्मिक, नैतिक और समुदाय-उन्मुख मूल्यों में गहराई से निहित था।
- राजाओं, व्यापारियों और संघों ने शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, बुनियादी ढाँचे और सांस्कृतिक संरक्षण पर ध्यान केंद्रित करते हुए सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने के लिए सामूहिक रूप से कार्य किया।
- धार्मिक कर्तव्यों और आर्थिक गतिविधियों के साथ परोपकार के एकीकरण ने सामुदायिक विकास के लिए एक मजबूत आधार स्थापित किया, एक विरासत जो भारत में आधुनिक कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी को प्रेरित करती है।
- औपनिवेशिक काल ने भारत में सीएसआर की नींव रखी, जिसमें टाटा, बिड़ला और गोदरेज जैसे उद्योगपतियों ने

सामाजिक कल्याण के साथ व्यावसायिक सफलता को जोड़ा।

- गांधी के ट्रस्टीशिप के दर्शन ने इस युग को गहराई से प्रभावित किया, जिसमें नैतिक व्यावसायिक प्रथाओं और सामाजिक भलाई के लिए धन के पुनर्वितरण पर जोर दिया गया।
- इस समय के दौरान सीएसआर प्रयास स्वतंत्रता आंदोलन से निकटता से जुड़े थे, जो शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय प्रगति पर केंद्रित थे।
- इन योगदानों ने सामाजिक रूप से जिम्मेदार व्यावसायिक प्रथाओं की विरासत बनाई जो भारत में आधुनिक सीएसआर पहलों को प्रेरित करती रही है।
- स्वतंत्रता के बाद की अवधि ने सीएसआर की दिशा में संरचित प्रयासों की शुरुआत की, जिसमें औद्योगिक और सामाजिक विकास के माध्यम से राष्ट्र निर्माण पर ध्यान केंद्रित किया गया।
- उद्योगपतियों ने दोहरी भूमिका निभाई: आर्थिक प्रगति को आगे बढ़ाना और शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और ग्रामीण कल्याण जैसी प्रमुख सामाजिक पहलों को वित्तपोषित करना।
- सार्वजनिक उपक्रम सामुदायिक विकास में महत्वपूर्ण योगदानकर्ता के रूप में उभरे, विशेष रूप से पिछड़े और आदिवासी क्षेत्रों में, उन्होंने अपने प्रयासों को सरकार की विकास योजनाओं के साथ जोड़ा।
- इस युग के दौरान सीएसआर गतिविधियाँ स्वैच्छिक थीं, नैतिक विचारों और सामाजिक भलाई के प्रति प्रतिबद्धता पर आधारित थीं, जिसने भविष्य के नियामक ढाँचों और कॉर्पोरेट जिम्मेदारी के लिए अधिक संरचित दृष्टिकोणों के लिए मंच तैयार किया।
- 1990 के दशक के आर्थिक उदारीकरण ने सीएसआर में एक महत्वपूर्ण बदलाव को चिह्नित किया, जो वैश्वीकरण और अंतर्राष्ट्रीय मानकों की शुरुआत से प्रेरित था।
- सीएसआर परोपकार से एक रणनीतिक प्राथमिकता के रूप में विकसित हुआ, जिसमें स्थिरता, नैतिक शासन और पारदर्शिता पर ध्यान केंद्रित किया गया।
- सार्वजनिक-निजी भागीदारी सामाजिक चुनौतियों का समाधान करने, व्यवसायों, सरकारों और गैर सरकारी संगठनों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने में सहायक बन गई।
- कंपनियों ने अपने ब्रांड की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए सीएसआर का लाभ उठाना शुरू कर दिया, अपने प्रयासों को लोगों, ग्रह और लाभ की ट्रिपल बॉटम लाइन के साथ संरेखित किया, जिससे भारत में आधुनिक सीएसआर प्रथाओं के लिए मंच तैयार हुआ।

- कंपनी अधिनियम, 2013 ने सीएसआर को संस्थागत बना दिया है, जिससे पात्र व्यवसायों को राष्ट्रीय विकास में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए मजबूर होना पड़ा है।
- सीएसआर एक रणनीतिक पहल में परिवर्तित हो गया है, जिसमें कंपनियाँ मापने योग्य प्रभावों और दीर्घकालिक लक्ष्यों पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं।
- तकनीकी प्रगति ने सीएसआर के दायरे और पहुँच को बढ़ाया है, जिससे सामाजिक चुनौतियों के लिए अभिनव समाधान संभव हो पाए हैं।
- महत्वपूर्ण प्रगति के बावजूद, असमान निधि वितरण और प्रभाव माप जैसे मुद्दे बेहतर ढाँचे और सहयोग की आवश्यकता को उजागर करते हैं।
- वैश्विक मानकों के साथ संरेखण: आधुनिक सीएसआर स्थिरता और नैतिक शासन पर ध्यान केंद्रित करते हुए पर्यावरण, सामाजिक और शासन (ईएसजी) ढाँचों के साथ तेजी से संरेखित हो रहा है।
- कॉर्पोरेट-एनजीओ सहयोग: निगमों और एनजीओ के बीच रणनीतिक साझेदारी कुशल कार्यान्वयन और मापनीय प्रभाव सुनिश्चित करती है, जिसके परिणामस्वरूप स्केलेबल, टिकाऊ परियोजनाएँ बनती हैं।
- सशक्तिकरण पर ध्यान: युवाओं और महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए कौशल विकास, लैंगिक असमानताओं को दूर करने और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए सीएसआर कार्यक्रमों का विस्तार किया जा रहा है।
- स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा: स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा सीएसआर के लिए प्राथमिकता वाले क्षेत्र बने हुए हैं, कंपनियाँ बुनियादी ढाँचे के निर्माण और महत्वपूर्ण जरूरतों को पूरा करने के प्रयासों को आगे बढ़ा रही हैं, जैसे कि कोविड-19 संकट के दौरान।

उपसंहार

भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) की प्रक्षेपवक्र रणनीतिक राष्ट्रीय उद्देश्यों के साथ जुड़े कॉर्पोरेट गतिविधियों के जानबूझकर एकीकरण के

लिए धार्मिक रूप से प्रेरित परोपकारी से एक महत्वपूर्ण बदलाव दर्शाता है। इस विकास ने सीएसआर को एक अनिवार्य के रूप में तैनात किया है, जिसमें कंपनियाँ न केवल नैतिक जिम्मेदारी को गले लगाती हैं बल्कि इसे स्थायी विकास के लिए मौलिक उत्प्रेरक के रूप में भी पहचानती हैं, जो राष्ट्र के व्यापक सामाजिक-आर्थिक संदर्भ के अनुरूप हैं। अनिवार्य सीएसआर नियमों के कार्यान्वयन के बाद, निगम भारत में प्रगति के निर्णायक एजेंट के रूप में उभरे हैं, सक्रिय रूप से विभिन्न पहलों में भाग लेते हैं जो सामाजिक जरूरतों को संबोधित करते हैं और समावेशी विकास को बढ़ावा देते हैं। सीएसआर के भविष्य के प्रक्षेपवक्र को नवाचार, सहयोगात्मक साझेदारी और स्थिरता के आकार का अनुमान लगाया जाता है, जो अधिक न्यायसंगत और स्थायी समाज के निर्माण में आवश्यक तत्वों के रूप में मान्यता प्राप्त हैं। अंततः, भारत में सीएसआर का भविष्य, अभिनव दृष्टिकोणों, सामूहिक कार्रवाई और पर्यावरणीय स्टूडेंटशिप के सहक्रियात्मक एकीकरण पर निर्भर करता है ताकि सार्वभौमिक समृद्धि, व्यापार विकास और सामुदायिक कल्याण के लिए अनुकूल वातावरण को बढ़ावा दिया जा सके।

संदर्भ:

1. शर्मा, ई. के., एवं किरण, आर. (2012)। कॉर्पोरेट सामाजिक दायित्व: प्रेरक कारक एवं चुनौतियाँ। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बिजनेस रिसर्च एंड डेवलपमेंट, 1(1), 28-37।
<https://doi.org/10.24102/ijbrd.v1i1.110>
2. मित्रा, एन. (2011)। भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक दायित्व का ऐतिहासिक परिदृश्य। इंडियन जर्नल ऑफ कॉर्पोरेट गवर्नेंस, 4(1), 25-35। <https://doi.org/10.1177/097468621100400103>
3. मिश्रा, एस., एवं सुअर, डी. (2010)। क्या कॉर्पोरेट सामाजिक दायित्व भारत में फर्म के प्रदर्शन को प्रभावित करता है? जर्नल ऑफ बिजनेस एथिक्स, 95(4), 571-601।
<https://doi.org/10.1007/s10551-010-0441-1>
4. बालासुब्रमण्यम, एन. के., किम्बर, डी., एवं सीमेंस्मा, एफ. (2005)। उभरते अवसर या सुदृढ़ परंपराएँ? भारत में सीएसआर के प्रति दृष्टिकोण एवं सीएसआर के विषय में चिंतन के रूझानों का एक विश्लेषण। जर्नल ऑफ कॉर्पोरेट सिटिजनशिप, 17, 79-92।
5. चहौद, टी., एमरलिंग, जे., कोल्ब, डी., कुबीना, आई., रेपिस्की, जी., एवं श्रेगर, सी. (2007)। भारत में कॉर्पोरेट सामाजिक एवं पर्यावरणीय दायित्व - संयुक्त राष्ट्र वैश्विक समझौते की भूमिका का आकलन। जर्मन डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट चर्चा पत्र, 8, 1-76।
<https://doi.org/10.2139/ssm.1496707>



हनुमानगढ़ जिले में पर्यावरणीय समस्याएं एवं उनके समाधान के सुझाव

डॉ महेश कुमार

सहायक आचार्य भूगोल, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़
महेन्द्र सिंह

शोधार्थी, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़

सारांश

हमारे भू-मंडल के वायुमंडल और पर्यावरण में लगातार बदलाव हो रहा है और नित्य प्रतिदिन तापमान और मौसम में बदलाव हो रहा है, उससे मानव जीवन खतरे में पड़ता जा रहा है। अब पर्यावरण शिक्षा सभी के लिए जरूरी हो गयी है। पर्यावरण शिक्षा उस विशिष्ट शिक्षा को कहते हैं जो जन-समुदाय को पर्यावरण जानकारियों से परिचित कराकर पर्यावरण बोध को पुष्ट करती है, पर्यावरण कठिनाइयों के कारण निवारण का मार्ग ढूंढती है तथा भविष्य की कठिनाइयों से आगाह कर जीवन को निरापद बनाने का मार्ग प्रशस्त करती है।

वहीं पर्यावरण शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि पर्यावरण शिक्षा वस्तुतः विश्व समुदाय को पर्यावरण सम्बन्धी दी जाने वाली वह शिक्षा है जिससे समस्याओं से अवगत होकर उनका समाधान ढूंढने और भविष्य में उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों की रोकथाम के लिये आवश्यक जानकारी प्राप्त होती है, जिसके आधार पर व्यक्तिगत या सामूहिक स्तर पर पर्यावरण समस्याओं से निजात पाने का मार्ग ढूंढा जा सकता है और भविष्य की कठिनाइयों को जाना जा सकता है। आज पर्यावरण से ही हर व्यक्ति जीवजंतु एवं वनस्पतियों को जीवन मिल रहा है, परंतु पर्यावरण की स्थिति ऐसी हो गई है कि जिसे संभालना बहुत मुश्किल हो गया है। प्रस्तुत शोध आलेख वर्तमान में पर्यावरण की कौन-कौन सी समस्याएं हैं और उसका निराकरण एवं समाधान कैसे किया जाये के उद्देश्य से प्रस्तुत है। आज पर्यावरणीय समस्याओं में जनसंख्या वृद्धि, प्रदूषण, वैश्विक ताप, समुद्र प्रदूषण, ओजोन परत का क्षतिग्रस्त होना, अपशिष्ट विघटन, जैव विविधता में कमी आदि समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जिसका समाधान एवं निराकरण अति आवश्यक हो गया है।

शब्द संकेत – वायुमंडल, पर्यावरण, समस्या, सुझाव।

पर्यावरण का अर्थ –

पर्यावरण शब्द संस्कृत भाषा के 'परि' उपसर्ग (चारों ओर) और 'आवरण' से मिलकर बना है जिसका अर्थ है ऐसी चीजों का समुच्चय जो किसी व्यक्ति या जीवधारी को चारों ओर से घेरे हुए हैं। हिन्दी शब्द पर्यावरण का 'परि' तथा 'आवरण' शब्दों का युग्म है। 'परि' का अर्थ –चारों तरफ व 'आवरण' का अर्थ – घेरा है। अर्थात् प्रकृति में जो भी चारों ओर परिलक्षित है यथाकृ वायु, घन, मृदा, पेड़ तथा पौधे तथा प्राणी सभी पर्यावरण के अंग हैं।

पर्यावरण की परिभाषाएँ –

वुडवर्थ के अनुसार, पर्यावरण शब्द का अर्थ उन सभी गहरी शक्तियों एवं तत्वों से है जो व्यक्ति को आजीवन प्रभावित करते हैं।

सी. सी. पार्क के अनुसार, "मनुष्य एक विशेष स्थान पर विशेष समय पर जिन सम्पूर्ण परिस्थितियों से घिरा हुआ है उसे पर्यावरण कहा जाता है।"

पर्यावरण अध्ययन परिवेश के सामाजिक और भौतिक घटकों को अन्तरक्रियाओं का अपमान घटक मिलकर ही हमारे सम्पूर्ण परिवेश का निर्माण करते हैं। सामाजिक घटकों में संस्कृति जिसके अन्तर्गत भाषा, मूल्य, दर्शन, आदि आते हैं तथा प्राकृतिक घटकों में हवा, पानी, मिट्टी, धूप, पशु-पक्षी, खनिज लवण, जंगल, वनस्पति, इत्यादि शामिल हैं। पर्यावरण अध्ययन में हम

एक और मानव एवं निर्मित समाज का अध्ययन करते हैं। दूसरी ओर प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों तथा उनकी कार्य प्रणाली का अध्ययन किया जाता है।

हनुमानगढ़ जिले का परिचय

राजस्थान स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व अनेक छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था। मुख्य रूप से यहां छोटी-छोटी रियासतें थी। स्वतंत्रता के पश्चात् सरदार पटेल के प्रयत्नों से राजस्थान के 22 देसी रियासतों का एकीकरण कार्य सम्पन्न हुआ तथा 30 मार्च 1949 को राज्य पूर्णगठन आयोग द्वारा नाम दिया गया "राजस्थान"। राजस्थान का वर्तमान स्वरूप 1 नवम्बर 1956 में निर्मित हुआ और उसी समय से इसे राज्य का दर्जा दिया गया। इतिहास में भी राजस्थान अपना स्थान रखता है। यहां के महापुरुषों ने साहस, पराक्रम, वीरता और बलिदान के आदर्श प्रस्तुत किया।

आज से 67 वर्ष पूर्व के राजस्थान और आज के राजस्थान में अत्याधिक अन्तर आ गया है। इसमें पानी का पूर्णतया अभाव था। अब धीरे-धीरे पानी पीने को व सिंचाई दोनों को मिलने लगा है। राजस्थान नहर परियोजना के द्वारा अत्यधिक पिछड़े क्षेत्र में भी पानी मिलने लगा है। राष्ट्रीय नीति के अनुरूप सामाजिक एवं आर्थिक कार्यक्रमों को प्रदेश में लागू कर गरीब अनुसूचित जाति व जनजातियों के जीवन स्तर को उंचा उठाने और प्रदेश को खुशहाल बनाने का दृढ़ संकल्प राज्य सरकार ने किया है।

चारों ओर लहलहाते खेतों के बीच आज जहां हनुमानगढ़ है इस क्षेत्र में प्राचीनकाल में शिवालिक पहाड़ियों से निकली सरस्वती एवं अनेक नदिया बहती थी। इन नदियों के मध्य यह क्षेत्र, ब्रह्मवती कहलाता था। मनुस्मृति में इसे देव निर्मित बतलाया गया है वेदों की अनेक रचनाओं तथा कई ब्रह्मण ग्रंथों की रचना इसी क्षेत्र में हुई। सरस्वती घाटी के इस क्षेत्र में अनेक सभ्यताएं फली-फूली। इस प्रकार हनुमानगढ़ क्षेत्र बहुत पहले से ही समृद्ध रहा है। बीकानेर स्टेट का हनुमानगढ़ ही एक ऐसा क्षेत्र था। जहां साल में दो बार फसलें हुआ करती थी। स्टेट के सेम क्षेत्र इस मामले में हनुमानगढ़ से पीछे थे। इस खुशहाली का कारण पुराने समय से लेकर अब तक घग्घर नदी प्राचीन सरस्वती रही। यहां के इतिहासिक भटनेर दुर्ग का छुकर गुजरने वाली यह नदी सदैव सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए वरदान साबित हुई है।

हनुमानगढ़ राजस्थान के उत्तर में स्थित है जो कि 29°5' से 30°6' उत्तरी आकांश में 74°3' से 75°3' पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है। हनुमानगढ़ 12 जुलाई 1994 को अस्तित्व में आया था इससे पहले यह श्रीगंगानगर की मुख्य तहसील के रूप में था जब हनुमानगढ़ राजस्थान का 31 वां जिला बना था तब हनुमानगढ़ में तीन उपखण्ड एवं सात तहसीलों में बांटा गया था। वर्तमान में हनुमानगढ़ के 7 उपखण्ड व 7 तहसीलें हैं, 7 विकास खण्ड, 1831 आबाद गांव एवं 76 गैर आबाद गांव है तथा 6 कस्बे हैं। हनुमानगढ़ जिले का कुल क्षेत्रफल 9656.09 वर्ग कि.मी. है। जिसमें 2011 में 17,74,692 लोग निवास कर रहे हैं। जिसमें से ग्रामीण जनसंख्या 14,24,228 एवं शहरी जनसंख्या 3,50,464। पुरुषों की कुल जनसंख्या 9,31,184 एवं महिलाओं की कुल जनसंख्या 8,43,508 निवास करती है। जिले का जनसंख्या घनत्व 184 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है तथा लिंगानुपात 906 है। जिले में साक्षरता अनुपात य 2011 की जनगणना के अनुसार) 67.13 प्रतिशत रहा जो कि राजस्थान के साक्षरता प्रतिशत य 66.11 प्रतिशत) से अधिक है। जिले में 2011 में 77.41 प्रतिशत पुरुष की एवं 55.84 प्रतिशत स्त्रियों की साक्षरता दर रही।

जिला बने 26 वर्ष बीत गए लेकिन यहां प्रदूषण मापने का सिस्टम तक नहीं

हनुमानगढ़ में वायु और जल प्रदूषण की जांच, प्रदूषण फैलाने वाली फैक्ट्रियों के खिलाफ भी सख्त कार्रवाई नहीं हो रही। पर्यावरण को स्वच्छ और साफ सुथरा रखने के लिए आमजन भी पेड़ पौधे लगाकर हर तरह से प्रयास करते हैं। चिंताजनक यह है कि पर्यावरण सुरक्षा को लेकर सरकार और प्रशासन दोनों ही ध्यान नहीं दे रहे हैं। 12 जुलाई 1994 को श्रीगंगानगर से अलग करके हनुमानगढ़ को राजस्थान का 31वां जिला बनाया गया था।

आपको यह जानकारी हैरानी होगी कि 26 वर्ष 10 महीने बीत गए लेकिन प्रदूषण पर नियंत्रण करने के लिए आज तक कोई प्रयास नहीं किए गए। इतने वर्ष बाद भी यहां प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का न तो कार्यालय बना है और न ही अधिकारियों की तैनाती हो सकी है। यह विडंबना ही है कि फैक्ट्रियों से लेकर

शहर में रजिस्टर्ड 52 हजार से अधिक वाहन वर्षों से सड़कों पर दौड़ रहे हैं।

लेकिन हवा, जल, भूमि और ध्वनि प्रदूषण मापने के लिए हमारे पास किसी भी प्रकार का मॉनिटरिंग सिस्टम उपलब्ध नहीं है। यानी, हमें खुद भी नहीं पता कि जो पानी हमारी नहरों में आता है या जिस हवा में सांस ले रहे हैं वह शुद्ध है या नहीं।

एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार एक वाहन 960 किलोमीटर चलने पर उतनी ऑक्सीजन को प्रदूषित कर देता है, जितना एक व्यक्ति एक साल में करता है। वाहन के धुएं में मौजूद सीसा या लेड, एक ऐसा जहर है जो नाड़ियों में इकट्ठा होकर, अनुवांशिक विकार पैदा करता है। सीसालेड/बड़ों की अपेक्षा, बच्चों को 5 गुना ज्यादा नुकसान पहुंचाता है।

बीकानेर संभाग में ही प्रदूषण मापने का मॉनिटरिंग सिस्टम नहीं प्रदूषण नियंत्रक बोर्ड:

उदयपुर, कोटा, जयपुर, अजमेर जैसी जगहों पर तो सिस्टम लगे हैं जहां रोजाना धूल, धुएं पानी आदि प्रदूषण की मॉनिटरिंग होती है। हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर सहित पूरे संभाग में ही प्रदूषण मापने के लिए कोई मॉनिटरिंग सिस्टम तक नहीं है। बिना इस सिस्टम के यह पता लगाना मुश्किल है की जिले में कितना प्रदूषित फैला है और इसे कैसे रोका जा सकता है। अभी नई योजना के तहत हर जिले में प्रदूषण मापक यंत्र लगाना है और इसपर काम चल रहा है।

प्रदूषण मंडल फैक्ट्रियों को सिर्फ एनओसी देने तक सीमित, इंसानों के साथ पेड़ पौधों पर भी पड़ता है प्रदूषण का प्रभाव जिला मुख्यालय स्थित रीको में ही 200 से अधिक फैक्ट्रियां हैं। इन फैक्ट्रियों से निकलने वाले प्रदूषण के स्तर को मापने के लिए पॉल्यूशन विभाग के पास ऑटोमेटिक मशीन तक नहीं है। ऐसे में प्रदूषण कंट्रोल बोर्ड का काम भी महज फैक्ट्रियों को एनओसी देना ही रहा गया है। फैक्ट्रियों से निकलने वाले प्रदूषित जल से जिला मुख्यालय के लोग वर्षों से परेशान हैं लेकिन आज तक इसपर कोई कार्रवाई नहीं की गई। ये फैक्ट्रियां रोजाना हवा में कितना जहर घोल रही हैं इसका भी पता लगा पाना मुश्किल है। सिविल लाइंस सहित विभिन्न कॉलोनी के लोग बदबू और फैक्ट्रियां से निकलने वाली अजीब गंध से परेशान रहते हैं और यही गंध उनके फेफड़ों तक पहुंचती रहती है।

धुएं का दुष्प्रभाव केवल मनुष्यों को ही नहीं, बल्कि जीवजन्तुओं—, पेड़पौधों, भूमि भवन पर पड़ता है। वाहनों से छोड़े गए धुएं में कार्बन मोनो ऑक्साइड लगभग 90 प्रतिशत तक हो सकती है। इससे दिमाग, फेफड़े, हृदय, गुर्दे और रक्त पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। फेफड़े के कैंसर और दमा जैसी बीमारियों का मूल कारण, वायु प्रदूषण ही है। इसकी मात्रा अधिकांश शहरों में आमतौर से बर्दाश्त की सीमा) 2000 माइक्रोग्रामप्रति घनमी/टरसे बहुत ज्यादा होती है। इसके अलावा नाइट्रोजन, ऑक्साइड और हाइड्रोजन लोगों के श्वास

के अलावा पेड़ पौधों को भी बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। वहीं फ़ैक्ट्रियां भी जहरीला धुंआ-

शहर के वातावरण में ध्वनि प्रदूषण घुल रहा है। यह शोर हमारी सेहत पर भारी पड़ रहा है। ध्वनि प्रदूषण की वजह से हमारे कान कमजोर होते जा रहे हैं। दिमाग पर भी इसका बुरा असर हो रहा है। छोटेबड़े वाहनों में प्रेशर हॉर्न- के इस्तेमाल आदि से आमजन, विद्यार्थी, मरीज, व्यवसायी सहित समाज का प्रायः हर वर्ग परेशान है। शहरी क्षेत्र में चिड़चिड़ापन, बहरापन, ब्लड प्रेशर, तनाव, अनिद्रा जैसी बीमारियों के शिकार बढ़ रहे हैं और इसका कारण ध्वनि प्रदूषण ही है। जहां केवल 60 डेसिबल तक ध्वनि ही उचित मानी गई है, हनुमानगढ़ में यह आंकड़ा बेहद खतरनाक स्तर तक पहुंच रहा है। लेकिन इससे भी खराब हालात टाउन स्थित सिविल हॉस्पिटल पर हैं। इस जिला अस्पताल में 5-10 मरीज रोजाना ध्वनि प्रदूषण जनित बीमारियों के उपचार के लिए पहुंचते हैं, लेकिन वहीं पर ध्वनि प्रदूषण का स्तर 96 डेसिबल मापा गया। हालांकि बस स्टैंड के मुकाबले यह कुछ कम है, लेकिन अस्पताल साइलेंट जोन में आता है। ऐसे में मरीजों की शांति भंग हो रही है। यही स्थिति शिक्षण संस्थाओं की भी है, जहां हमारे नोनिहाल साइलेंसर रहित वाहनो अथवा तेज हॉर्न के कारण पढ़ाई में ध्यान नहीं लगा पाते। जिला अस्पताल में हर दिन आ रहे बहरेपन की परेशानी के 5 से 10 मरीज मेडिकल एक्सपर्ट की मानें, तो प्रेशर हॉर्न के कारण लोगों में चिड़चिड़ापन और बहरेपन की समस्या बढ़ती जा रही है। जिला अस्पताल में लगभग 5 से 10 ऐसे मरीज इलाज के लिए पहुंचते हैं। इससे सबसे अधिक परेशानी बच्चों और बुजुर्गों को होती है। प्रेशर हॉर्न के कारण दिमाग में दबाव बनने लगता है, जिससे चिड़चिड़ापन बना रहता है। साथ ही सिरदर्द भी होने लगता है। ध्वनि प्रदूषण का सबसे बुरा प्रभाव बच्चों एवं वृद्धों पर पड़ रहा है। इस संबंध में डाक्टरों का कहना है कि 80 डेसिबल से अधिक शोर चिड़चिड़ापन, बहरापन, ब्लड प्रेशर, तनाव, अनिद्रा जैसी बीमारी को जन्म देता है। 100 डेसिबल से अधिक का शोर हृदयाघात का कारण बन सकता है। ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए राज्य प्रदूषण नियंत्रण परिषद ने पैमाना निर्धारित कर रखा है। इसके बावजूद ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण की दिशा में सार्थक कदम नहीं उठाया जा रहा है।

हनुमानगढ़ जिले में पर्यावरणीय समस्याएं -

जनसंख्या वृद्धि - आज देश की जनसंख्या 121 करोड़ से भी अधिक हो गई है। प्राप्त संसाधनों की कमी से उत्पन्न समस्याओं जैसे भोजन, पानी, ईंधन की कमी तथा सामाजिक समस्याओं जैसे अपराध, भुखमरी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य समस्याओं आदि का बढ़ना। परिवार कल्याण मंत्रालय की 1992 की रिपोर्ट से यह बात सामने आई कि 2025 तक भारत, चीन को पीछे छोड़कर संसार का सबसे जनसंख्या वाला राष्ट्र बन जाएगा।

प्रदूषण - जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रदूषण की समस्या भी बढ़ गई है। वायु, जल, मृदा आदि के प्रदूषित होने के कारण जन सामान्य, जीव-जंतु एवं वनस्पति पर इसका प्रतिकूल प्रभाव हो रहा है। कई प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक समस्या जन्म ले रही हैं एवं अनुमान के आधार पर व्यक्ति अपने आहार-विहार के

साथ लगभग 24 मिलीग्राम विषैले तत्व रोज ग्रहण करता है। मृदा की भी उपजाऊ क्षमता क्षीर्ण हो रही है।

वैश्विक ताप वृद्धि - इसके कारण पृथ्वी और समुद्र के तापक्रम में वृद्धि हो रही है। ग्लेशियर पिघल रहे हैं। ब्रिटेन के अर्थशास्त्री निकोलस स्टर्न की रिपोर्ट के अनुसार सन् 2100 तक धरती के तापमान में 10 डिग्री सेल्सियस से भी अधिक वृद्धि संभावित है। जिससे मौसम परिवर्तन के खतरे के साथ 30 प्रतिशत जमीन सूखा ग्रस्त हो जाएगी। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार गंगोत्री ग्लेशियर अगले 20 से 30 सालों में समाप्त हो जाएगी। हरित ग्रह प्रभाव के संकट के कारण वायुमण्डल में ऊष्मा गैसों की वृद्धि हुई है। अम्लीय वर्षा की अधिकता हो रही है।

ओजोन परत का क्षतिग्रस्त होना - वायु मंडल में पायी जाने वाली ओजोन परत सूर्य की पराबैंगनी किरणों से रक्षा करती है। परंतु विषैली गैसों क्लोरीन एवं ब्रोमाइड के कारण उसमें छिद्र उत्पन्न हो गये हैं। और सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणें सीधे पृथ्वी पर आ रही हैं जिससे कई प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक विकार, पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं में व्याधियां उत्पन्न हो रही हैं।

अपशिष्ट विघटन - यह एक गंभीर समस्या है क्योंकि प्लास्टिक, कचरा, नाभिकीय अपशिष्ट आदि का नष्ट न हो पाना कई प्रकार की समस्याएं जैसे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्या, पर्यावरण आदि संबंधित समस्याओं को जन्म दे रहा है। प्राकृतिक संसाधनों की दोहन - आज व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग निर्दयता से कर रहा है जिसके परिणामस्वरूप जलस्तर में कमी, मृदा में विषैलेतत्वों की बढ़ोत्तरी, वायु एवं जल प्रदूषण जैसे समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार 2080 तक 3 अरब 20 करोड़ लोगों को पीने का पानी नहीं मिलेगा और महामारियों की वृद्धि के साथ उनसे निपटने के साधन कम होंगे।

जैव विविधता की कमी - स्वयं के निवास हेतु जंगलों और वृक्षों की कटाई, पशुवध, पशुपालन में कमी आदि अमानवीय कृत्यों के कारण परिस्थितकीय तंत्र में असंतुलन उत्पन्न हो गया है जिसका सीधा प्रभाव जीव जंतु और वनस्पति पर हुआ है, और पूर्व में पायी जाने वाली प्रजातियां धीरे-धीरे या तो विलुप्त हो चुकी हैं या विलुप्त होने की कगार पर हैं। संकटग्रस्त प्रजातियों में काला हिरण, मगरमच्छ, भारतीय जंगली गधा आदि हैं। विलुप्त प्रजातियों में एशियाई चीता, गुलाबी सिरवाली बतख शामिल है, पक्षियों की संख्या के गिरावट एवं विस्थापन गंभीर समस्या बन गई है।

हनुमानगढ़ जिले में पर्यावरण अध्ययन का क्षेत्र - पर्यावरण के प्रति सोच का आरम्भ कुछ प्रमुख घटनाओं के घटित होने के कारण हुआ है। आज हमारा पर्यावरण का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। हमारा रहन सहन एवं भौतिक वस्तुओं का अत्यधिक प्रयोग पर्यावरण के लिए अत्यधिक नुकसानदायक है। हम

पर्यावरणीय पदार्थों को नहीं बचायेंगे तो हमारी आगामी पीढ़ी इन संसाधनों का प्रयोग नहीं कर पायेगी ।

भारत में प्राचीन काल से ही प्रकृति एवं पर्यावरण का अटूट संबंध रहा है, और धार्मिक ग्रंथों में प्रकृति को जो स्थान प्राप्त है वह अतुलनीय है। प्रकृति की सुरक्षा के लिये हमारी संस्कृति में अनेक प्रयास किये गये, सामान्य जन को प्रकृति से जोड़े रखने के लिये उसकी रक्षा, पूजन, विधान, संस्कार आदि को धर्म से जोड़ा गया। गौ एवं अन्य जानवरों का पूजन वंश रक्षा के लिये तथा विभिन्न नदियों, पेड़ों, पर्वतों का पूजन उसकी सुरक्षा और अस्तित्व को बनाने के लिये अति आवश्यक हो गया था। परंतु जैसे समय व्यतीत होता गया व्यक्तियों की विचारधारा, सोच, अभिवृत्ति, आस्था, भावों में परिवर्तन होता गया और व्यक्ति धीरे-धीरे स्वार्थी होता चला गया। प्रकृति को दोहन एवं क्षरण करता चला गया जिसका परिणाम आज हमारे सामने है। हमारा परिवेश जिसमें व्यक्ति, पेड़-पौधे एवं जीव-जंतु निवास करते हैं, पर्यावरण तो कहलाता है परंतु आज जो स्थिति उसकी है वह बहुत चिंतनीय एवं व्यथित करने वाली है। जिस पर्यावरण में रहकर व्यक्ति अपना स्वास्थ्य संवर्धन करता था वही आज उसके लिये अभिशाप हो गया है। जिसके जिम्मेदार भी हम ही हैं। हमने स्वार्थवश स्वयं का विकास एवं प्रगति करने के लिये पर्यावरण के साथ खिलवाड़ किया है और उसके प्रदूषित किया है। जिसका दुष्प्रभाव आज व्यक्ति के जीवन में विभिन्न गंभीर बीमारियों, प्राकृतिक आपदा, जलवायु, परिवर्तन आदि के रूप में परिलक्षित हो रहा है। चाणक्य ने पर्यावरण की महत्त्व को स्पष्ट करते हुये कहा है कि किसी भी राज्य की स्थिरता पर्यावरण की स्वच्छता पर निर्भर करती है । चरक संहिता में भी स्पष्ट उल्लेख है कि स्वास्थ्य जीवन के लिये शुद्ध वायु, जल और मिट्टी आवश्यक कारक हैं। पर्यावरणीय असंतुलन के कारण आज देश की गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, गंभीर शारीरिक रोग जैसे एड्स, कैंसर बगैरह उत्पन्न हो रहे हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (एम.एस.एस.ओ.) के सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2011-12 में देश में गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की संख्या 26 करोड़ 94 लाख थी इसी प्रकार केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय नई दिल्ली (2015) की रिपोर्ट के अनुसार एच आई बी/एड्स पीड़ितों की संख्या महाराष्ट्र में 1 लाख 59 हजार 25 रोगी हैं और यह राज्य देश में एड्स रोगियों की कुल संख्या के आधार पर प्रथम स्थान पर है। इसके बाद दूसरा स्थान आंध्रप्रदेश का है जहां 1 लाख 31 हजार 892 एड्स रोगी हैं। इसलिए देश के प्रत्येक नागरिक का यह नैतिक कर्तव्य है कि पर्यावरण को सुरक्षित तथा संरक्षित कर नैतिकता का परिचय दें।

जल प्रदूषण

पंजाब में व्यास नदी में शुगर मिल का लाखों टन शीरा और अन्य अपशिष्ट बहने से प्रदूषित हुआ पानी राजस्थान की तीन प्रमुख नहरों इंदिरा गांधी नहर, भाखड़ा और गंगनहर में आने लगा है। लालिमा लिए गहरे मटमैले रंग के इस पानी को देख आमजन में दहशत का माहौल है। इस पानी के सेवन से महामारी फैलने की आशंका के चलते जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग ने श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिलों में सभी जलदाय

योजनाओं की डिगियों में पानी की आपूर्ति रोक दी है। इन तीनों नहरों के पानी का उपयोग प्रदेश के दस जिलों में पेयजल के रूप में हो रहा है। नहरों के पानी में प्रदूषण का स्तर जांचने के लिए जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग ने दोनों जिलों में पानी के नमूने लिए हैं। इसके नतीजे 48 घंटे बाद आएंगे और उसके बाद ही जलप्रदाय योजनाओं की डिगियों में पानी की आपूर्ति के बारे में निर्णय किया जाएगा। अगर पानी पीने लायक नहीं हुआ तो प्रदेश के दस जिले जल संकट की चपेट में आ जाएंगे।

पंजाब के बटाला जिले के गांव कीड़ी अफगाना में चड्ढा शुगर एवं वाइन मिल के टैंकों में भरा लाखों टन शीरा 16 मई को अत्यधिक तापमान के कारण उफन कर बाहर आ गया और मिल के अपशिष्टों की निकासी के लिए बनाए गए नाले से होता हुआ व्यास नदी के पानी में मिल गया। मिल से बहे शीरे की परत व्यास नदी के चालीस पचास किलोमीटर क्षेत्र में फैल गई। - अब यह पानी हरिके हैडवर्क्स होते हुए राजस्थान की नहरों में आ रहा है।

जल संकट की आशंका

पंजाब से मिली जानकारी के अनुसार हरिके हैडवर्क्स पर अभी प्रदूषित पानी की मात्रा एक लाख क्यूसेक से अधिक है। राजस्थान और पंजाब की नहरों के लिए प्रतिदिन ग्यारह हजार क्यूसेक के करीब पानी पंजाब और राजस्थान की नहरों में छोड़ा जा रहा है। इस हिसाब से प्रदूषित पानी के खपने में कम से कम दस दिन लग जाएंगे। जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग की ओर से लिए गए पानी के नमूनों की जांच में नहरों में आ रहा पानी पीने लायक नहीं पाया गया तो प्रदेश के दस जिलों में पेयजल का संकट खड़ा हो सकता है।

मुद्दा गंभीर, सरकार गंभीर नहीं

सतलुज और व्यास नदियों के प्रदूषण का यह मुद्दा गंभीर है। लेकिन न तो इस पर पंजाब सरकार गंभीर है और न ही राजस्थान सरकार। नतीजा सामने है। पंजाब के कई जिले आज कैंसर की चपेट में हैं। वहाँ कैंसर महामारी का रूप ले चुका है । भटिंडा से बीकानेर जाने वाली एक यात्री गाड़ी का नाम ही कैंसर ट्रेन हो गया है। कुछ ऐसी ही स्थिति श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिलों में भी बन रही है। पिछले कई सालों में इन दोनों जिलों में कैंसर रोगियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। हनुमानगढ़ जिले की टिब्बी तहसील के एक गाँव में तो कैंसर रोगियों की संख्या राष्ट्रीय औसत से ज्यादा पाई गई है। पंजाब से गंगनहर, भाखड़ा और इंदिरा गांधी नहरों के माध्यम से आ रहे सतलुज और व्यास नदियों के पानी को राजस्थान के आठ जिलों की डेढ़ करोड़ से अधिक की आबादी पेयजल के रूप में उपयोग कर रही है। ऐसे में राजस्थान सरकार को बजाय कागजी दावे करने के जल प्रदूषण रोकने को पंजाब के साथ साझा योजना बनानी चाहिये। इसी में दोनों राज्यों का हित है।

खतरनाक अपशिष्ट

औद्योगिक इकाइयों का रासायनिक अपशिष्ट कितना खतरनाक है, इसका पता उन गाँवों में जाने पर पता चलता है जो रासायनिक अपशिष्टों को सतलुज और व्यास नदियों तक ले जाने वाले नाले के मुहाने पर बसे हैं। उन गाँवों में कैंसर की बीमारी तो आम है। नाले से उठने वाली गैस इतनी जहरीली है कि उसके असर से मकानों के लगे लोहे के गेटों में छेद हो गए हैं। यही स्थिति घरों के ऊपर लगी डिश एंटीना की छतरियों की है। नदियों में डाले जा रहे औद्योगिक इकाइयों के रासायनिक अपशिष्ट से जब लोहे में छेद हो सकते हैं तो मानव शरीर की क्या हालत होती होगी, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है।

प्राकृतिक संसाधन व खनिज सम्पदा:-

किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रकृति द्वारा बिना किसी शुल्क के प्रदान किये गये या निःशुल्क दिए गए संसाधन प्राकृतिक संसाधन हैं। जिले के आर्थिक विकास में खनिजों का कृषि के साथ-साथ महत्व अत्यधिक है। खनिज संसाधनों से आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है। हनुमानगढ़ राजस्थान के मुख्य उत्पादक जिलों में उपर है। चावल उत्पादन में हनुमानगढ़ राजस्थान में प्रथम है। गेहूँ उत्पादन में द्वितीय स्थान पर है। अतः हनुमानगढ़ एक कृषि प्रधान जिला है। प्रारम्भिक काल में हनुमानगढ़ में शोरा उत्पादित किया जा रहा है। हनुमानगढ़ में 1965-66 में पल्लू एवं पूरबसर के आसपास के क्षेत्रों में जिप्सम की खोज की गई तथा कुछ वर्षों पश्चात् उत्पादन कार्य हो गया। हनुमानगढ़ राजस्थान की 93 प्रतिशत एवं देश की 85 प्रतिशत जिप्सम की पूर्ति कर रहा है। हनुमानगढ़ जिले के नोहर, रावतसर, भादरा एवं पीलीबंगा तहसील के क्षेत्रों में जिप्सम उत्पादित किया जा रहा है।

पर्यावरणीय समस्याओं के हल हेतु सुझाव-

1. विद्यालय एवं महाविद्यालयों में "पर्यावरण अध्ययन" एक अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाया जाये।
2. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम तथा अन्य अधिनियमों का कड़ाई से पालन किया जाये।

3. वाहनों को प्रदूषण मुक्त कर सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा का उपयोग यथा संभव किया जाये।
4. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं विकास किया जाये।
5. वनों और जंगलों का विकास वृक्षारोपण करके किया जाये और वन प्रबंधन को बढ़ावा दिया जाये।
6. वन्य प्राणी संरक्षण हेतु स्थानीय एवं राज्य स्तरीय प्रयास किये जाएं।
7. अपशिष्ट पदार्थों के पुनर्चक्रण एवं पुनर्उपयोग पर बल देकर अपशिष्ट पदार्थ प्रबंधन किया जाये।
8. पशु पालन को प्रोत्साहन एवं जैविक खाद का उपयोग कृषि हेतु किया जाये।
9. व्यक्तियों में धर्म, आध्यात्मिक एवं वैदिक कार्यों के प्रति सकारात्मक सोच एवं रुचि जाग्रित की जाये।

निष्कर्ष:-

आज पर्यावरण में विभिन्न प्रकार की गंभीर समस्याएं जन्म ले रही हैं। जिसमें योगदान व्यक्तियों का ही है। यदि समय रहते इसका निराकरण नहीं किया गया तो जीव-जंतुओं, वनस्पतियों एवं मानव के अस्तित्व पर विलुप्त होने का खतरा उत्पन्न हो जाएगा। पर्यावरण को शुद्ध, स्वच्छ एवं संरक्षित रखने की नैतिक जिम्मेदारी हमारी ही है।

संदर्भ

1. जैन, एम.(2013), पर्यावरण संरक्षण में महिलाओं की भूमिका, रचना, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ एकादमी भोपाल पृ. क्र. 45
2. श्रीवास्तव, आर. (2004), आधुनिक पर्यावरण समस्याओं का वैदिक समाधान, रिसर्च लिंक जर्नल 14 (प्पू.4) पृ. क्र. 87
3. तिवारी, ए.(2014) जनसंख्या वृद्धि एवं पर्यावरण सुरक्षा, कृष्ण कम्प्यूटर्स एंड प्रिंटेर्स सागर, पृ.क्र. 237-38
4. राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी पत्रिका (2015) स्वामी विवेकानंद शासकीय महाविद्यालय लखनादौन पृ. क्र. 67



ग्रामीण परिवेश में युवा विकास और सामाजिक कौशल पर खेलों का प्रभाव

डॉ.कपिल कुमार साहू

सह प्राध्यापक एकलव्य विश्वविद्यालय दमोह, मध्य प्रदेश

सारांश

ग्रामीण परिवेश में युवाओं के विकास हेतु खेल एक अच्छा माध्यम बन सकता है, जिसे शारीरिक शिक्षा के रूप में युवाओं तक पहुंचाने का कार्य वर्तमान में प्रत्येक शिक्षण संस्थान में किया जा रहा है, जिससे युवाओं का विकास एवं उनको सामाजिक कौशल की शिक्षा प्रदान की जा सके। यह आपको सोचने पर मजबूर करता है कि खेल कैसे दोस्त बनाने में मदद करते हैं। खेल जीतने के बारे में नहीं है खेल एक युवा व्यक्ति के जीवन को बड़े महत्वपूर्ण तरीकों से बदल सकते हैं। खेल बच्चों और किसानों को मनोरंजन प्रतियोगिता और एक टीम के रूप में काम करने के माध्यम से महत्वपूर्ण कौशल सीखाते हैं, लेकिन खेलों के कई अच्छे पहलू भी हैं जैसे बेहतर स्वास्थ्य और दोस्त बनाना जो बच्चे खेल खेलते हैं, उनकी वयस्क होने पर शारीरिक रूप से सक्रिय रहने की संभावना अधिक होती है युवा खेल बेहतर अकादमी प्रदर्शन और उच्च परीक्षा स्कूल में योगदान दे सकते हैं।

शारीरिक गतिविधि मस्तिष्क और शरीर के लिए अच्छी होती है या बच्चों को स्कूल में अच्छा प्रदर्शन करने और समस्याओं को हल करने में मदद करती है सक्रिय रहने से आत्मविश्वास और कौशल बढ़ता है जिससे सक्रिय बने रहना आसान हो जाता है सामाजिक और भावनात्मक कौशल सिखाना बहुत जरूरी है यह स्कूल के कार्यों को पूर्ण करने में मदद करता है। युवा खेलों के बड़े मनोवैज्ञानिक लाभ हैं वे बच्चों और किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण में बहुत मदद करते हैं।

मुख्य शब्दावली— ग्रामीण परिवेश में, शारीरिक शिक्षा, खेल, सामाजिक कौशल।

परिचय

ग्रामीण स्कूल के बच्चों की खेल भावना वास्तव में उन्हें पढ़ाई और बाद के करियर को बढ़ावा दे सकती है। अध्ययनों से पता चलता है कि जो छात्र खेल खेलते हैं उनके स्कूल छोड़ने की संभावना कम होती है वह स्कूल और परीक्षाओं में भी बेहतर प्रदर्शन करते हैं साथ ही उनके कॉलेज जाने की संभावना भी अधिक होती है यह लाभ स्नातक होने पर ही समाप्त नहीं होते जो लोग स्कूल में खेल खेलते हैं वह आमतौर पर काम पर बेहतर प्रदर्शन करते हैं वह हर साल दूसरों की तुलना में 7% से 8 % अधिक रुपए भी कमा सकते हैं। यह साबित करता है कि दीर्घकालिन सफलता के लिए खेल कितने महत्वपूर्ण हैं।

खेल का युवा विकास और सामाजिक कौशल पर प्रभाव

खेल बच्चों के विकास में बड़ी भूमिका निभाते हैं खासकर जब बात दोस्त बनाने और सामाजिक कौशल की हो अध्ययनों से पता चलता है कि खेल बच्चों और युवाओं के लिए सकारात्मक बदलाव लाते हैं। खेल बच्चों को जीवन के विभिन्न परिस्थितियों से निपटना सीखा सकते हैं वे दूसरों के साथ मिलकर कार्य करना भी सीख जाते हैं। प्रत्येक खिलाड़ी भावनात्मक रूप से विकसित होता है, शारीरिक गतिविधियां उनके मस्तिष्क में अच्छे रसायनों को जारी करके उन्हें खुशी भी महसूस कराती हैं। किसी खेल का हिस्सा बनने से बच्चों का आत्मविश्वास बढ़ सकता है आंशिक रूप से टीम और कोच की वजह से टीमवर्क महत्वपूर्ण सामाजिक कौशल जैसे मिलजुल कर रहना और सहानुभूति दिखाने को निखारता है यह कौशल उन्हें जीवन भर साथ चलने वाले दोस्त बनाने में भी मदद करता है जिससे वह महसूस करते हैं कि वह किसी के साथ जुड़े हुए हैं, खेल बच्चों को अनुशासन सीखाता है,

उन्हें नियमों का पालन करना चाहिए और कोच और रेफरी जैसे अधिकारियों की बात सुननी चाहिए। यह अनुशासन बच्चों को स्कूल में दी गयी शारीरिक शिक्षा में दिखाई देती है। यह शिक्षा न केवल अनुशासन और टीमवर्क सीखाती है बल्कि दूसरों के प्रति सहानुभूति सहयोग जिम्मेदारी की भावना को बढ़ाती है। युवाओं पर खेलों का गहरा प्रभाव होता है जो सिर्फ शारीरिक स्वास्थ्य से कहीं ज्यादा होता है वह युवाओं की समग्र विकास में मदद करते हैं खेल खेलने के जरिए बच्चे ऐसे कौशल सीखते हैं जो उनके पूरे जीवन में काम आते हैं, इनमें बेहतर स्वास्थ्य स्कूल में अच्छा प्रदर्शन करना दूसरों के साथ घुल मिलकर रहना और खुद के बारे में अच्छा महसूस करना है। खेलों का हिस्सा बनने के कई फायदे हैं, यह 2021 तक के कई आंकड़ों में केवल आधे से थोड़े ज्यादा बच्चों ने ही खेल खेला या सबक लिया है।

खेल जीवन जीने का कौशल सीखाते हैं इनमें दूसरे से बात करना साथ मिलकर काम करना और समय का प्रबंध करना शामिल है यह कौशल बच्चों को उनके भविष्य की सफलता के लिए बहुत बड़ा अंतर पैदा करते हैं युवा खेलों में शामिल सभी बच्चों के माता-पिता और परिवार एक बड़ी भूमिका निभाते हैं वे युवा एथलीट को एक से अधिक तरीकों से विकसित होने में मदद करते हैं खेल के माध्यम से बच्चे जो सीखते हैं उसका मूल्य खेल के मैदान से कहीं आगे तक जाता है यह उन्हें आने वाले वर्षों में सीखने और बढ़ाने की उनकी यात्रा में सहयोग करता है खेलों से प्राप्त कौशल अच्छे भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है वे बच्चों को चमकने और सफल होने का मौका देते हैं जिससे खेलों में बताया गया समय बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है लेकिन खेल खेलने से कभी-कभी चोट लगने का खतरा हो सकता है और हर कोई इसमें शामिल नहीं हो सकता क्योंकि इसमें बहुत ज्यादा समय और पैसा खर्च हो सकता है इन मुद्दों के बावजूद खेल खेलने की कई फायदे हैं जैसे जीवन कौशल

सीखना और समुदाय का हिस्सा बनना यह सब आपको भावनात्मक रूप से बेहतर महसूस कराते हैं।

खेल से लाभ

1. समग्र विकास – शारीरिक मानसिक और सामाजिक कौशल विकास युवाओं को जीवन में सफल बनने में मदद करता है।
2. जीवन कौशल – खेल बच्चों को टीमवर्क, संवाद करना, लक्ष्य की निर्धारित करना और बेहतर बना सीखने में मदद करते हैं।
3. सामुदायिक भागीदारी– खेल खेलने से युवा अधिक सक्रिय होते हैं और अच्छे मित्र बनाने में मदद मिलती है।
4. अनुशासन – अभ्यास, धैर्य, नियमों का पालन, कार्य के परिणाम को सिखाते हैं।

शारीरिक शिक्षा के रूप में खेलों का महत्व

- विद्यालय में सह-पाठ्यक्रम गतिविधियों को सम्मिलित करना शारीरिक शिक्षा का ही एक भाग है। जिसकी सहायता से छात्रों को सक्रिय एवं स्वस्थ रखने का प्रयास किया जाता है।
- शारीरिक शिक्षा द्वारा छात्र अपने समय का सदप्रयोग करना सीखते हैं। यह उनके चरित्र एवं व्यक्तित्व को निखारने का कार्य करती हैं। यह उनके भीतर व्याप्त कौशलों का विकास करती हैं एवं उनमें निपुणता लाने का कार्य करती हैं। यह शरीर से सम्बंधित सभी समस्याओं का निवारण करती है। यह संवेगात्मक रूप से छात्रों को संतुलित रखने की कला है।
- इस शिक्षा के द्वारा छात्रों में अनुशासन एवं नैतिक मूल्यों का विकास किया जाता है। यह छात्रों को मानसिक एवं बौद्धिक दक्षता प्रदान करने हेतु बेहद लाभदायक है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार—“भारत को आज भगवत गीता के साथ फुटबाल के मैदान की भी जरूरत है।”
- शारीरिक शिक्षा की न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य में भी महान् उपयोगिता है। शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व पर बल देते हुए रोशयू ने कहा है, “यह शरीर का ठोस गठन ही है जो मन का सही और निश्चित संचालन करता है।”
- सैकेंडरी एजुकेशन कमीशन भी शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व से परिचित था उसने कहा था कि, “देश के युवा का शारीरिक कल्याण राज्य के मुख्य सरोकारों में से एक होना चाहिए, और जीवन की इस अवधि में शारीरिक कल्याण के सामान्य नियमों से भागने के गंभीर परिणाम हो सकते हैं।”
- आधुनिक जीवन में निरुद्योगिता, यंत्रवत जीवन और कंप्यूटरीकरण ने एक नये प्रकार के मानव को पैदा किया है जो दिन में घंटों बैठते हैं। 21 वीं शताब्दी

अंतरिक्ष और तकनोलोजी की भीमकायता का युग है, जो गति, शोर और तनाव पैदा करने वाले कारको से परिपूर्ण है। हमारे समाज और आर्थिक व्यवस्था की मांग द्वारा पैदा किये गये चिन्ता व दबाव और बुद्धिवाद की ओर हमारा समर्पण विस्मयकारी है। शहरी जीवन शैली ने कई तनावों को पैदा किया है और ये मानवता के लिए विनाशकारी साबित होंगे।

आधुनिकता ने हमारे ऊपर अपरिहार्य प्रतिकूल प्रभाव डाले हैं। पर्यावरण प्रदूषण, संस्कृति का ह्रास, सामाजिक विघटन, धार्मिक असहिष्णुता आदि ने पारिस्थितिक एवं सामाजिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। आज मानव अस्तित्व और समायोजन संकट का सामना कर रहा है, जो अब से पहले कभी उसके सम्मुख नहीं था। अपना अस्तित्व बचाने और इन संकटों पर विजय पाने के लिए व्यक्ति को साहस, निर्भीकता, शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक और बौद्धिक रूप में मजबूत बनाना होगा। शारीरिक शिक्षा वह एजेंसी है जो शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में व्यापकता व भिन्नता लाकर सामाजिक दायित्वों को प्रभावी ढंग से निभा रही है।

शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता

शारीरिक शिक्षा शब्द का प्रयोग शारीरिक क्रियाओं के लिये किया जाता रहा है क्योंकि शारीरिक शिक्षा परमात्मा की सर्वोत्तम रचना मनुष्यों के लिये अत्यावश्यक है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। स्वस्थ शरीर कैसे रहे इस हेतु शारीरिक शिक्षा के ज्ञान की जानकारी प्रत्येक देश के लिये जरूरी है। शारीरिक शिक्षा का कार्य क्षेत्र व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना है। जे. ए. विलियम्स के अनुसार “शारीरिक शिक्षा व्यक्ति को उन परिस्थितियों में कुशल नेतृत्व प्रदान करता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ, मानसिक रूप से सजग तथा सामाजिक जीवन में परिस्थितियों के अनुरूप कार्य कर सके। शारीरिक शिक्षा के अनेक आयाम हैं। यह शिक्षा का एक अभिन्न अंग है और कला, मानविकी और साथ ही विज्ञान से संबंधित है। यह बायोमैकेनिक्स, मानव आंदोलन, प्रबंधन, प्रशिक्षण कार्यक्रम, खिलाड़ियों के लिए उनके खेल और कार्य अनुसूची के अनुसार पोषण योजना, खेल समाजशास्त्र, खेल मनोविज्ञान आदि जैसे अनुसंधानों के माध्यम से शिक्षा की लगभग हर शाखा में कई कार्यक्षेत्र प्रदान करता है। जो सभी एक व्यक्ति के स्वास्थ्य, फिटनेस और कल्याण से संबंधित है। शारीरिक शिक्षा पेशेवर शारीरिक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं के साथ शिक्षा के सभी स्तरों पर स्कूलों और कॉलेजों की सेवा करते हैं। शारीरिक शिक्षा में कई विकल्प हैं जो प्रत्येक आयु वर्ग और लिंग के लिए उनकी आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त हैं। यह बच्चों के स्वस्थ विकास और विकास पर ध्यान केंद्रित करता है और प्रदर्शन और क्षमता को बढ़ाता है। शारीरिक शिक्षा शारीरिक गतिविधियों के विभिन्न समूहों को परिभाषित करती है जो लोगों की फिटनेस, स्वास्थ्य और कल्याण से जुड़ी होती हैं।

शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वस्थ नागरिकों का निर्माण करना, क्योंकि स्वस्थ नागरिक ही देश के विकास में सहयोग

दे सकते हैं। व्यक्ति में खेल की भावना, नेतृत्व, आत्मानुशासन, कार्य क्षमता, साहस, सहनशीलता, सहयोग और सामाजिकता आदि गुणों का विकास करना। शारीरिक शिक्षा में अब छात्रों की शारीरिक सक्षमता तथा मूवमेंट और सुरक्षा के ज्ञान एवं एक सक्रिय तथा स्वस्थ जीवन-शैली का विकास करने से जुड़े विविध कार्यकलाप करने में उनकी क्षमता में सुधार लाने का एक सतत दृष्टिकोण निहित है। शारीरिक शिक्षा में खेल, नृत्य और फिटनेस प्रशिक्षण सहित विविध कार्यकलाप शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, शारीरिक शिक्षा विश्वास, आरोग्यता और सामाजिक कौशल-जिन्हें अन्य विषयों के माध्यम से प्राप्त करना अधिक कठिन हो सकता है, का विकास करने और बनाए रखने में सहायता करती है।

निष्कर्ष

खेल टीम का हिस्सा बनने से छात्र अपनी पढ़ाई के प्रति अधिक समर्पित होते हैं यह उन्हें अनुशासित और लचीला होना सिखाता है जो स्कूल में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए महत्वपूर्ण है कई माता-पिता सोचते हैं की टीम के खेल उनके बच्चों की पढ़ाई और भविष्य की नौकरियां दोनों में मदद कर सकते हैं वह यह भी मानते हैं कि खेल जीवन के महत्वपूर्ण सबक सिखाते हैं जैसे साथ मिलकर काम करना नेतृत्व करना और अच्छे सामाजिक कौशल में कौशल जीवन में बहुत उपयोगी है यह लंबे लंबे समय तक चलते हैं अधिकांश वयस्क जो अभी भी खेल खेलते हैं उन्होंने युवावस्था में ही खेल खेलना शुरू

कर दिया था और इनमें से आधे युवा का कहना है कि आज खेल उन्हें कम तनाव ग्रस्त और मानसिक रूप से स्वस्थ महसूस करने में सहयोग करता है। सक्रिय रहना और खेलों में भाग लेना मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य दोनों को बेहतर बनाता है अंत में एक मजबूत और अधिक प्रभावी कार्यबल बनता है।

संदर्भ सूची

1. सिंह, डॉ.शांतनु, सिंह, श्रीमती नीतू, (2023), शारीरिक शिक्षा, पृ.सं.-5
2. शर्मा, श्रीमती राजकुमारी, (2017), खेल मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र, पृ.सं.-16
3. मूर्ति, डॉ.एस.नारायण, (2020), व्यायाम क्रिया विज्ञान, पृ.सं.-266
4. कुमार, डॉ.रविन्द्र कुमार, (2017), खेल प्रबन्धन, पृ.सं.-69
5. डबास, डॉ.सुनील, (2018), शारीरिक फिटनेस तथा सुस्वास्थ्य, पृ.सं.-35
6. काण्डपाल, दिनेश चन्द्र, (2016), खेल मनोविज्ञान तथा समाज शास्त्र, पृ.सं.-55
7. कमले, एम.एल., (2012), शारीरिक शिक्षा के सिद्धांत तथा इतिहास, पृ.सं.-6
8. सिंह, डॉ.श्याम नारायण, (2019), शारीरिक शिक्षा एक समग्र अध्ययन, पृ.सं.-227